



खेती



• इस अंक में •

कृषि नवाचार से पोषण क्रांति की ओर

सूरजमुखी की वैज्ञानिक खेती

पराली से बायोचार बनाकर बढ़ाएं आय

तिलहन उप-उत्पादों से पोषण और मूल्य संवर्धन





परंपरा से तकनीक तक भारतीय कृषि की समृद्ध यात्रा



भारत में पर्व हमारी सभ्यता की स्मृति, प्रकृति के प्रति कृतज्ञता और जीवन के सामुदायिक उत्सव हैं। शारदीय नवरात्रि, विजयादशमी, शस्त्र पूजा, शरद पूर्णिमा तथा अन्य लोकपर्व भारतीय समाज को उस जीवन दृष्टि से जोड़ते हैं, जिसमें प्रकृति, अन्न, स्वास्थ्य, श्रम और संस्कृति एक-दूसरे से अलग नहीं, बल्कि एक ही जीवन चक्र के हिस्से हैं।

लोकजीवन की कहावत-‘जैसा अन्न वैसा मन’, अन्न और स्वास्थ्य के संबंध को सहज भाषा में व्यक्त करती है। हमारी पारंपरिक आहार संस्कृति ऋतु, स्थानीय संसाधनों और उपलब्ध कृषि उपज के अनुरूप विकसित हुई। श्री अन्न, तिलहन, फल, सब्जियां और विविध स्थानीय खाद्य उत्पाद केवल आहार ही नहीं बल्कि हमारी कृषि जैव-विविधता और सामुदायिक ज्ञान के संवाहक भी हैं।

इसीलिए भारतीय परंपरा में अन्न के प्रति सम्मान सर्वोपरि रहा है। ‘अन्नदाता सुखी भव’ केवल शुभकामना नहीं, किसान और कृषि के प्रति हमारी सभ्यता की कृतज्ञता है। पर्वों पर अन्न की पूजा और नए खाद्यान्न से जुड़े लोकाचार हमें याद दिलाते हैं कि खेत से थाली तक की यात्रा में किसान, प्रकृति और समाज का साझा योगदान है।

विजयादशमी पर शस्त्र पूजा की परंपरा श्रम, कौशल और कार्य में प्रयुक्त साधनों के प्रति सम्मान का प्रतीक है। आज पारंपरिक कृषि उपकरणों के साथ आधुनिक मशीनें और डिजिटल तकनीकें किसानों की कार्यक्षमता बढ़ाने तथा संसाधनों के समुचित उपयोग में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। ड्रोन, सेंसर, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, रिमोट सेंसिंग और सटीक कृषि जैसी आधुनिक तकनीकें फसल निगरानी, कीट एवं रोग प्रबंधन, सिंचाई तथा पोषक तत्वों के कुशल उपयोग में नई संभावनाएं प्रदान कर रही हैं। ये आधुनिक तकनीकें खेती को अधिक किफायती, सुगम और लाभकारी बनाकर किसानों की समृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। स्थानीय कृषि-जलवायु परिस्थितियों के अनुरूप विकसित तकनीकें, व्यावहारिक प्रशिक्षण और तकनीकी मार्गदर्शन किसानों की कार्यक्षमता एवं उत्पादकता बढ़ा रहे हैं। साथ ही, कस्टम हायरिंग केंद्रों और किसान उत्पादक संगठनों के माध्यम से छोटे एवं सीमांत किसानों तक आधुनिक कृषि उपकरणों और तकनीकों की पहुँच बढ़ रही है, जिससे कृषि लागत में कमी, संसाधनों का बेहतर उपयोग और आय वृद्धि के नए अवसर सृजित हो रहे हैं।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा पारंपरिक कृषि ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के समन्वय से कृषि को अधिक उन्नत, समृद्ध और टिकाऊ बनाने के निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं। परिषद के अनुसंधान संस्थानों और कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से नवीन तकनीकों, स्थानीय परिस्थितियों में परीक्षण तथा किसानों के खेतों पर प्रदर्शन कर उनकी व्यावहारिक उपयोगिता सुनिश्चित की जा रही है। साथ ही, किसानों के अनुभवों और सुझावों के आधार पर तकनीकों को अधिक प्रभावी एवं किसान अनुकूल बनाया जा रहा है। फसल सुधार, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन, जलवायु सहिष्णु कृषि और डिजिटल तकनीकों के क्षेत्र में परिषद के अनुसंधान एवं नवाचार कृषि उत्पादकता, संसाधन दक्षता और किसानों की समृद्धि बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

आज कृषि की सफलता का पैमाना केवल उत्पादन नहीं है। कम लागत, कम जोखिम, बेहतर पोषण, संसाधनों का संरक्षण और किसान की आय में वृद्धि हमारी प्राथमिकताएं हैं। वैज्ञानिक कृषि सलाह, मौसम-आधारित निर्णय, मृदा स्वास्थ्य, डिजिटल सेवाएं, बेहतर बाजार संपर्क, कृषि यंत्रीकरण और किसान केंद्रित सरकारी योजनाएं, कृषि को अधिक ज्ञान आधारित और तकनीक सक्षम बना रही हैं। हमारे सामने चुनौती परंपरा और आधुनिकता में से किसी एक को चुनने की नहीं, बल्कि परंपरा के उपयोगी ज्ञान को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझने, विज्ञान को तकनीक में बदलने और तकनीक को खेत तक पहुँचाने की है।

(मांगी लाल जाट)

(मांगी लाल जाट)

सचिव (डेयर) एवं महानिदेशक (भाकृअनुप)



खेती

कृषि विज्ञान द्वारा ग्रामोत्थान की मासिक पत्रिका
वर्ष: 79, अंक: 6, अक्टूबर 2026

संपादन सलाहकार समिति

- | | |
|--|------------|
| 1. डा. राजबीर सिंह | अध्यक्ष |
| उपमहानिदेशक (कृषि विस्तार)
भाकृअनुप, कृषि अनुसंधान भवन-I, नई दिल्ली | |
| 2. डा. अनुराधा अग्रवाल | सदस्य |
| परियोजना निदेशक, भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंधन निदेशालय,
कृषि अनुसंधान भवन-I, नई दिल्ली | |
| 3. डा. दिनेश कुमार | सदस्य |
| प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान विभाग
भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली | |
| 4. डा. रैहाना हबीब कथ | सदस्य |
| प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)
शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
कश्मीर | |
| 5. डा. अनिल खिप्पल | सदस्य |
| प्रधान वैज्ञानिक (संसाधन प्रबंधन)
भाकृअनुप-भारतीय गेहूं एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल,
हरियाणा | |
| 6. डा. अमृत लाल मीणा | सदस्य |
| वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)
भाकृअनुप-भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम,
मेरठ, उत्तर प्रदेश | |
| 7. डा. एन.के. पंवार | सदस्य |
| वरिष्ठ वैज्ञानिक
भाकृअनुप-राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, क्षेत्रीय केंद्र,
रांची, झारखंड | |
| 8. डा. ओम प्रकाश अहलावत | सदस्य |
| प्रधान वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
भाकृअनुप-भारतीय गेहूं एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल | |
| 9. डा. राकेश कुमार | सदस्य |
| सहायक महानिदेशक (एएफ-सीसी), भाकृअनुप, नई दिल्ली | |
| 10. श्री जे.पी. सिंह | सदस्य |
| कृषि-मीडिया सलाहकार, किसान आज तक
कृषि पत्रकार | |
| 11. श्री भारत भूषण त्यागी | सदस्य |
| बीठा गांव, उत्तर प्रदेश (प्रगतिशील किसान) | |
| 12. डा. अनु राहल | सदस्य |
| प्रधान वैज्ञानिक, भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंधन निदेशालय
कृषि अनुसंधान भवन-I, नई दिल्ली-110012 | |
| 13. सुश्री सुनीता अरोड़ा | सदस्य सचिव |
| मुख्य तकनीकी अधिकारी,
भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंधन निदेशालय,
कृषि अनुसंधान भवन-I, नई दिल्ली | |

प्रधान संपादक
डा. अनुराधा अग्रवाल

संपादक
सुनीता अरोड़ा

पुनीत भसीन
प्रभारी (उत्पादन एकक)

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
दूरभाष: 011-25843657

E-mail: businessuniticar@gmail.com

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12

एक प्रति: रु. 50.00 वार्षिक : रु. 500.00
विशेषांक : रु. 200.00

E-mail : khetidipa@gmail.com

विषय-सूची



निदेशक की कलम से

खाद्य प्रसंस्करण से समृद्धि की ओर-अनुराधा अग्रवाल

4 विश्व खाद्य दिवस

कृषि नवाचार से पोषण क्रांति की ओर
सुनीता अरोड़ा



10 भू पोषण

पराली से बायोचार बनाकर बढ़ाएं आय
मैनाक खां और देवाशीष गोलुई



6 तिलहन

सूरजमुखी की वैज्ञानिक खेती
देवेश कुमार और सी.पी.एन. गौतम



13 सफलता गाथा

सरसों की उन्नत किस्म
'आरएच-1706' से बढ़ी आमदनी
एम.एस. मीना, जे.पी. मिश्र और स्नेहा राठौर



8 नई किस्म

पूसा शालीमार मक्का हाइब्रिड-1
जयंत एस. भट्ट, गणपति मुक्री, दिग्वेन्द्र पाल, जहूर अहमद दर और चंदु सिंह



15 लाभकारी

तिलहन उप-उत्पादों से पोषण और मूल्य संवर्धन
प्रद्युम्न यादव, के. सौजन्या, शिवम कुमार सिंह, के.एस.वी.पी. चंद्रिका और जी. सुरेश



विषय-सूची

18 प्रभावी

शून्य जुताई की बढ़ती उपयोगिता
सौरभ कुमार और विकास मिश्रा



21 महत्व

टिकाऊ कृषि हेतु प्रभावी प्राकृतिक
खेती

सुशील कुमार शर्मा, नारायण साहू, विनोद
कुमार वासनिक, ललित लक्ष्मण खरबीकर
और अनिल दीक्षित



25 सफलता गाथा

लाख की वैज्ञानिक खेती से मिली
समृद्धि

उदय कुमार एम.एस., राजवर्धन पाटील,
परमानंद साहू, संजय कुमार पाण्डेय और
दिनेश कुमार



27 प्रणाली

जलवायु अनुकूल कृषि वानिकी

रामप्रकाश यादव, प्रभात तिवारी, राकेश
कुमार और एम.जे. डोबरियाल



31 कृषि कैलेण्डर

अक्टूबर के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह, अंजली पटेल, अवनीश
प्रकाश सिंह, कपिला शेखावत, विनय
उपाध्याय और प्रवीण कुमार उपाध्याय



महानिदेशक के डेस्क से

आवरण II

परंपरा से तकनीक तक भारतीय कृषि
की समृद्ध यात्रा

पुस्तक समीक्षा

आवरण III

श्री अन्न: प्रकृति एवं स्वास्थ्य रक्षक



डिस्कलेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारीयों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुनः प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों/कीटनाशकों की डोज संबंधित सस्तुतियों का प्रयोग विशेषों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।



निदेशक की कलम से

खाद्य प्रसंस्करण से समृद्धि की ओर

भारत में कृषि करोड़ों लोगों की आजीविका, ग्रामीण अर्थव्यवस्था की धुरी और राष्ट्र की खाद्य सुरक्षा का आधार है। आज बदलते बाजार, बढ़ती उपभोक्ता मांग और कृषि उपज के नुकसान को बचाने के लिए खाद्य प्रसंस्करण बेहद आवश्यक है। खाद्य प्रसंस्करण कृषि और उद्योग के बीच ऐसी सशक्त कड़ी है, जो कच्ची उपज को मूल्यवर्धित उत्पादों में बदलकर आर्थिक अवसर प्रदान करती है। भारत की कृषि व्यवस्था आज केवल खाद्य उत्पादन तक सीमित नहीं है, बल्कि मूल्य संवर्धन, रोजगार सृजन और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रही है। इस परिवर्तन में खाद्य प्रसंस्करण एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में उभर रहा है।

भारत में विविध कृषि जलवायु और फसलों की प्रचुर उपलब्धता खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के लिए अनेक अवसर प्रदान करती है। खेत में पैदा होने वाला टमाटर जब सॉस, प्यूरी या पाउडर का रूप लेता है, आम जब पल्प और पेय उत्पादों में परिवर्तित होता है, आलू से चिप्स, फलों से जैम, सब्जियों से अचार और अनाज जब पौष्टिक एवं सुविधाजनक खाद्य उत्पादों में बदलता है, तब कृषि उत्पादन को बाजार की नई संभावनाओं से जोड़ा जाता है। ये उत्पाद कृषि उपज को अतिरिक्त आर्थिक मूल्य प्रदान करते हैं।

भारत में फल, सब्जियां, अनाज, दुग्ध उत्पाद, मसाले और श्री अन्न प्रसंस्करण के लिए उचित हैं। विशेष रूप से जल्दी खराब होने वाली उपज के मामले में कटाई के बाद उचित प्रबंधन और प्रसंस्करण की सुविधाएं आवश्यक हो जाती हैं। प्रसंस्करण के माध्यम से मौसमी उत्पादों को लंबे समय तक उपयोग योग्य बनाया जा सकता है। स्थानीय स्तर पर छोटे प्रसंस्करण केंद्रों का विकास इन चुनौतियों से निपटने में उपयोगी भूमिका निभा सकता है।

आज खाद्य प्रसंस्करण को केवल बड़े कारखानों तक सीमित रखने के बजाय गांव की उद्यमशीलता और किसान समूहों से जोड़ने की आवश्यकता है। किसान उत्पादक संगठन, स्वयं सहायता समूह, महिला उद्यमी और ग्रामीण युवा स्थानीय स्तर पर ही इस व्यवसाय को स्थापित कर सकते हैं। श्री अन्न, मसाला प्रसंस्करण, अचार, चिप्स, मुरब्बे, सूखे फल और तैयार खाद्य पदार्थों के क्षेत्र में असीमित अवसर मौजूद हैं। श्री अन्न आधारित खाद्य उत्पाद, फलों के उत्पाद, औषधीय एवं सुगंधित उत्पादों का प्रसंस्करण, स्थानीय पारंपरिक खाद्य उत्पादों का व्यावसायीकरण ग्रामीण युवाओं के लिए नये अवसर प्रदान कर सकता है।

इस क्षेत्र में सफलता के लिए गुणवत्ता और खाद्य सुरक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी। उत्पाद की आकर्षक ब्रांडिंग और डिजिटल विपणन को जोड़ने से ग्रामीण उद्यम सफलता की नई ऊंचाइयों को छू सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि कृषि उत्पादन को बाजार की मांग, उपभोक्ता की पसंद और प्रसंस्करण क्षमता के साथ जोड़ा जाए। फसल चयन से लेकर कटाई, भंडारण, प्रसंस्करण और विपणन तक एक समन्वित मूल्य श्रृंखला विकसित करनी होगी। उचित प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता, तकनीकी मार्गदर्शन और बाजार तक पहुंच इस प्रक्रिया को गति दे सकते हैं। साथ ही स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप कम लागत वाली तकनीकों का विकास छोटे उद्यमों के लिए अधिक व्यावहारिक हो सकता है।

इस प्रकार खाद्य प्रसंस्करण कृषि के भविष्य का केवल एक विकल्प नहीं, बल्कि मूल्यवर्धन, रोजगार और ग्रामीण उद्यमिता को जोड़ने वाला महत्वपूर्ण क्षेत्र है। आज समय की मांग है कि कृषि उपज को खेत से बाजार तक पहुंचाने की क्रिया को नये दृष्टिकोण से देखा जाए। जब किसान, उद्यमी और संस्थाएं मिलकर इस दिशा में आगे बढ़ेंगे, तब खाद्य प्रसंस्करण ग्रामीण विकास और कृषि आधारित समृद्धि की एक महत्वपूर्ण आधारशिला बन सकता है। यह किसान की मेहनत को अधिक आर्थिक मूल्य दिलवाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

अनुराधा

(अनुराधा अग्रवाल)



कृषि नवाचार से पोषण क्रांति की ओर

सुनीता अरोड़ा

“ विश्व खाद्य दिवस 2026 का विषय Innovate Today, Nourish Tomorrow (आज नवाचार, कल पोषण) यह बताता है कि आने वाली पीढ़ियों के लिए पर्याप्त, सुरक्षित, पौष्टिक और टिकाऊ आहार सुनिश्चित करने के लिए आज की आवश्यकता है नवाचारों को अपनाना। आहार केवल भूख मिटाने के लिए नहीं है बल्कि स्वास्थ्य, उत्पादकता, आर्थिक विकास और सामाजिक कल्याण की आधारशिला भी है। इसलिए भविष्य की खाद्य सुरक्षा का रास्ता खेत से लेकर थाली तक होने वाले निरंतर नवाचारों से होकर गुजरता है। आज दुनिया अनेक चुनौतियों का सामना कर रही है। इनमें बढ़ती आबादी, जलवायु परिवर्तन, जल संसाधनों पर दबाव, मृदा की घटती गुणवत्ता, प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण और खाद्य उत्पादों का अपव्यय जैसी समस्याएं खाद्य एवं पोषण को प्रभावित कर रही हैं। आज आवश्यकता ऐसी खाद्य प्रणाली की है, जो अधिक उत्पादन के साथ बेहतर पोषण, संसाधनों का संरक्षण और किसानों की आय सुनिश्चित करें। ”

आधुनिक कृषि में नवाचार का आशय केवल अत्याधुनिक मशीनों या उपकरणों का प्रयोग नहीं है। इसका आशय है कि उन्नत बीज, उर्वर खेत, जैव सुदृढ़ीकृत फसलें, सूखा एवं गर्मी सहनशील फसलें, कम समय में अधिक उत्पादक फसलें, सूक्ष्म सिंचाई, सटीक खेती, ड्रोन, सेंसर, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और डिजिटल कृषि सेवाओं आदि से कृषि को अधिक दक्ष एवं आधुनिक बनाना। वहीं दूसरी ओर मौसम आधारित सलाह और डिजिटल प्लेटफार्म किसानों को सही समय पर निर्णय लेने में सहायता कर रहे हैं।

इसके अतिरिक्त सटीक कृषि द्वारा जल, उर्वरकों और कृषि रसायनों का प्रयोग



आवश्यकता के अनुसार किया जाता है। इसमें लागत कम होने के साथ ही प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में भी मदद मिलती है। इसी तरह, एकीकृत कृषि, संरक्षण कृषि, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और स्वास्थ्य पर आधारित तकनीकें भविष्य की टिकाऊ खेती को मजबूत आधार दे सकती हैं।

खाद्य सुरक्षा का अर्थ केवल भरपेट आहार नहीं है। स्वस्थ समाज के लिए प्रोटीन, विटामिन, खनिज और अन्य आवश्यक पोषक तत्वों से भरपूर विविध आहार जरूरी हैं। इसलिए कृषि में पोषण केंद्रित दृष्टिकोण को अपनाना आवश्यक है।

श्री अन्न, दलहन, तिलहन, फल, सब्जियां और स्थानीय पोषक फसलों का उत्पादन एवं उपयोग बढ़ाना इस दिशा में जरूरी कदम है। जैव संवर्धित फसलों के माध्यम से आयरन, जिंक और अन्य पोषक तत्वों से समृद्ध फसलों का विकास कुपोषण की चुनौती से निपटने के लिए बेहद उपयोगी साबित हो सकता है।

भविष्य की खाद्य सुरक्षा सीधे जल और मृदा के संरक्षण से जुड़ी है। जलवायु परिवर्तन की मार से कृषि सीधे तौर पर प्रभावित होती है। ऐसे में कम जल से अधिक उत्पादन, सूक्ष्म सिंचाई, वर्षा जल संचयन, प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन, पलवार और जल संरक्षण तकनीकों का ज्ञान होना जरूरी है।

इसी तरह मृदा में जैविक पदार्थों की मात्रा बढ़ाना, संतुलित पोषक तत्वों का प्रयोग, फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन, फसल विविधीकरण आदि मृदा



समृद्ध फसल है खाद्य सुरक्षा का आधार

की उर्वराशक्ति को बनाये रखने के लिए आवश्यक है।

कटाई उपरांत होने वाली हानि किसानों की आय और देश की खाद्य उपलब्धता दोनों को प्रभावित करती है। आधुनिक भंडारण, कोल्ड स्टोरेज, उपयुक्त पैकेजिंग, बेहतर प्रसंस्करण और समुचित परिवहन व्यवस्था से फल, सब्जियों और अन्य उत्पादों के अपव्यय को कम किया जा सकता है।

कृषि प्रसंस्करण में नवाचार किसानों को कच्चे उत्पाद की बजाय मूल्यवर्धित उत्पाद बेचने का अवसर देता है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार और उद्यमिता के नये अवसर सृजित होते हैं।

किसी भी नवाचार की सफलता तभी

संभव है जब वह किसान की वास्तविक आवश्यकता और आर्थिक क्षमता के अनुरूप हो। विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों तक नई तकनीकी की पहुंच, प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता और बाजार सुनिश्चित करना जरूरी है।

कृषि वैज्ञानिकों, किसानों, स्टार्टअप, कृषि उद्योग, सहकारी संस्थाओं, वित्तीय संस्थानों और नीति निर्माताओं के बीच मजबूत साझेदारी द्वारा ही नवाचार को प्रयोगशाला से खेत तक पहुंचाया जा सकता है। स्थानीय ज्ञान और आधुनिक विज्ञान का समन्वय ही इसे सफल और प्रभावी बना सकता है।

‘आज नवाचार, कल पोषण’ केवल एक थीम नहीं, बल्कि भविष्य की खाद्य व्यवस्था के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण है। इसका संदेश स्पष्ट है कि भविष्य की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के लिए आज ऐसे समाधान विकसित करने होंगे, जो उत्पादन बढ़ाने के साथ पोषण में सुधार करें, प्राकृतिक संसाधनों को बचाएं और किसानों को आर्थिक रूप से साथ-साथ सशक्त बनाएं।

विश्व खाद्य दिवस 2026 हमें यह संदेश देता है कि भविष्य की स्वस्थ थाली खेत में आज लिए गए निर्णयों से तैयार होगी। यदि नवाचार को प्रकृति अनुकूल, किसान केंद्रित और पोषण केंद्रित बनाया जाए तो कृषि केवल आहार उत्पादन का माध्यम ही नहीं रहेगी, बल्कि स्वस्थ समाज, समृद्ध ग्रामीण अर्थव्यवस्था और टिकाऊ भविष्य की मजबूत आधारशिला बनेगी।



पोषण सुरक्षा में फसलों की अहम भूमिका



सूरजमुखी की वैज्ञानिक खेती

देवेश कुमार¹ और सी.पी.एन. गौतम²

🔥 सूरजमुखी एक महत्वपूर्ण तिलहनी फसल है, जो उच्च गुणवत्ता वाले तेल, कम अवधि और विभिन्न जलवायु परिस्थितियों में अनुकूलन क्षमता के कारण किसानों के लिए उपयोगी है। देश में खाद्य तेलों की बढ़ती मांग को देखते हुए तिलहन उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता है। इस दिशा में सूरजमुखी की वैज्ञानिक खेती सतत तिलहन उत्पादन का एक बेहतर विकल्प हो सकती है। सूरजमुखी के बीजों में लगभग 38-45 प्रतिशत तेल पाया जाता है, जो असंतृप्त वसीय अम्लों से भरपूर होता है। यह फसल लगभग 90-120 दिनों में तैयार हो जाती है तथा खरीफ, रबी और जायद तीनों मौसमों में उगाई जा सकती है। इसकी गहरी जड़ प्रणाली मृदा में उपलब्ध नमी और पोषक तत्वों के उपयोग में सहायक होती है, जिससे सीमित सिंचाई की परिस्थितियों में भी इसकी खेती की जा सकती है। 🔥

सूरजमुखी को फसलचक्र में शामिल करने से कृषि प्रणाली में विविधता बढ़ाने तथा कुछ कीट एवं रोग चक्रों को कम करने में सहायता मिल सकती है। उन्नत किस्मों, संतुलित पोषण, समय पर बुआई और समेकित कीट प्रबंधन जैसी वैज्ञानिक तकनीकों को

अपनाकर बेहतर उपज प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार सूरजमुखी की खेती किसानों की आय बढ़ाने के साथ देश में तिलहन उत्पादन और खाद्य तेलों की उपलब्धता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

उन्नत किस्मों का प्रदर्शन

सूरजमुखी की वास्तविक एवं संभावित उपज के अंतर को कम करने, किसानों और कृषि वैज्ञानिकों के बीच प्रत्यक्ष संवाद स्थापित करने तथा विभिन्न कृषि-जलवायु

परिस्थितियों में नवीन तकनीकों की उपयुक्तता एवं प्रभावशीलता का आकलन करने के लिए उन्नत किस्मों का प्रदर्शन महत्वपूर्ण है। इसके माध्यम से उन्नत किस्मों एवं वैज्ञानिक कृषि तकनीकों की आर्थिक व्यवहार्यता प्रदर्शित कर किसानों को अधिक उत्पादन और लाभ के लिए इन्हें अपनाने हेतु प्रोत्साहित किया जा सकता है।

सूरजमुखी की फसल लगभग 90-110 दिनों में पककर तैयार हो जाती है, जिससे

¹वैज्ञानिक (कृषि अभियंत्रण); ²वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र, संत कबीर नगर, पोस्ट-छपरा मगर्वी, जनपद-संत कबीर नगर-272162

सारणी: सूरजमुखी फसल की लागत का विवरण (प्रति एकड़)

लागत का विवरण	लागत (रुपये)
भूमि की तैयारी	1,200+400
बीज सामग्री	800
बीज उपचार	190
बुआई	400 (हाथ से)/1,500 (प्लांटर द्वारा)
छंटाई	400
उर्वरक एवं खाद	2,500
निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई	1,350
पौध संरक्षण	1,300
कटाई एवं अन्य विविध व्यय	1,500
मड़ाई/गहाई	800
सफाई एवं पैकिंग	400
परिवहन	800

यह बहुफसली प्रणाली के लिए उपयुक्त है। इसकी संकर एवं मिश्रित दोनों प्रकार की किस्में उपलब्ध हैं। प्रमुख मिश्रित किस्मों में सूर्या, ज्वालामुखी, मॉडर्न एवं एमएसएफएच-4 शामिल हैं, जबकि प्रमुख संकर किस्मों में केवीएसएफएच-1, एसएच-3322, एफएसएच-17 तथा कावेरी-618 शामिल हैं। इनमें एफएसएच-17 एवं केवीएसएफएच-1 जायद मौसम के लिए विशेष रूप से उपयुक्त मानी जाती हैं, क्योंकि इनमें अधिक ताप सहनशीलता एवं तेल की मात्रा अधिक होती है। सामान्यतः उन्नत किस्मों में 20-30 क्विंटल प्रति हैक्टर तक बीज उपज देने की क्षमता होती है। इनके समुचित उपयोग से फसल सघनता, उत्पादकता, रोजगार और किसानों की आय बढ़ाने में सहायता मिल सकती है।

बुआई की विधि

सूरजमुखी की बुआई सीड ड्रिल, मल्टी-क्रॉप प्लांटर, न्यूमेटिक प्लांटर तथा सीड-कम-फर्टिलाइजर ड्रिल से की जा सकती

है। ये कृषि यंत्र बीजों को उचित गहराई एवं दूरी पर बोने में सहायक होते हैं, जिससे हाथ से बुआई की तुलना में कार्य की गति और सटीकता बढ़ती है। मशीन से बोए गए खेतों में यांत्रिक निराई-गुड़ाई भी आसानी से की जा सकती है। रोटरी वीडर अथवा पॉवर वीडर के उपयोग से खरपतवार प्रबंधन और मृदा में वायु संचार बेहतर किया जा सकता है। यंत्रकृत बुआई से समय एवं श्रम की बचत, लागत में कमी, समान अंकुरण और बेहतर पौध स्थापना में सहायता मिलती है।

बीज दर एवं बीज उपचार

मिश्रित किस्मों के लिए 2-3 कि.ग्रा. तथा संकर किस्मों के लिए 2-2.5 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ पर्याप्त होता है। अच्छे अंकुरण तथा प्रारंभिक रोग-कीट प्रबंधन के लिए बीज उपचार आवश्यक है। बीजों को 24 घंटे पानी में भिगोने से अंकुरण में सहायता मिलती है। आवश्यकता के अनुसार अनुशंसित फफूंदनाशी एवं कीटनाशी से बीज उपचार करने पर मृदा जनित रोगों और प्रारंभिक कीट प्रकोप से बचाव में सहायता मिलती है।

पोषक तत्व एवं सिंचाई प्रबंधन

सूरजमुखी से बेहतर उत्पादन के लिए संतुलित पोषण आवश्यक है। सामान्य अनुशंसा के अनुसार प्रति हैक्टर 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 40 कि.ग्रा. पोटैश की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस एवं पोटैश की पूरी मात्रा बुआई के समय देनी चाहिए। शेष नाइट्रोजन बुआई के 25-30 दिनों बाद टॉप ड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिए।

जायद सूरजमुखी में सामान्यतः तीन सिंचाइयां पर्याप्त होती हैं। फूल आने और बीज बनने की अवस्थाओं में सिंचाई विशेष रूप से आवश्यक है। समय पर हल्की सिंचाई फसल की बेहतर वृद्धि में सहायक होती है, जबकि अधिक सिंचाई से पौधों के गिरने की आशंका बढ़ सकती है।

खरपतवार, परागण एवं कीट प्रबंधन

फसल की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार प्रबंधन आवश्यक है। इसके लिए 1-2 निराई-गुड़ाई पर्याप्त रहती हैं। सूरजमुखी में बेहतर बीज भराव के लिए परागण महत्वपूर्ण है। मधुमक्खियां एवं अन्य परागणकारी कीट इसमें प्रमुख भूमिका निभाते हैं। जहां इनकी गतिविधि कम हो, वहां सुबह के समय हाथ से परागण में सहायता की जा सकती है।

सूरजमुखी के प्रमुख कीटों में दीमक, लीफ हॉपर और डस्की बग शामिल हैं। नियमित

सिफारिशें

- उच्च उत्पादक एवं कीट-रोग सहनशील संकर किस्मों को देना बढ़ावा
- बुआई से पूर्व मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करें
- तेल की मात्रा बढ़ाने के लिए अनुशंसित मात्रा में सल्फर का प्रयोग करें
- ड्रिप सिंचाई जैसी जल दक्ष तकनीकों को अपनाएं
- फूल एवं बीज विकास की अवस्था में समय पर सिंचाई करें
- अंतरफसल एवं रिले क्रॉपिंग प्रणालियों को बढ़ावा दें
- समेकित कीट एवं पोषक तत्व प्रबंधन अपनाएं
- सिंचित क्षेत्रों में सूरजमुखी के क्षेत्र को विस्तृत करें

खेत निरीक्षण और समय पर पौध संरक्षण उपाय अपनाकर फसल हानि को कम किया जा सकता है। इसके लिए समेकित कीट प्रबंधन तकनीकों को प्राथमिकता देनी चाहिए।

कटाई एवं उत्पादन

जब फूल का पिछला भाग पीला पड़ जाए तथा बीज कठोर और भूरे रंग के हो जाएं, तब फसल कटाई के लिए तैयार मानी जाती है। कटाई के बाद फूलों के सिरों को छाया में सुखाकर सावधानीपूर्वक मड़ाई करनी चाहिए। उचित फसल प्रबंधन से मिश्रित किस्मों में लगभग 12-15 क्विंटल तथा संकर किस्मों में 20-25 क्विंटल प्रति हैक्टर तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

उच्च उत्पादक संकर किस्मों, समय पर बुआई, संतुलित पोषण, कुशल सिंचाई तथा समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन (आईपीएम) को अपनाकर उत्पादन और लाभ में वृद्धि की जा सकती है। सूरजमुखी उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए अनुसंधान केंद्रों/कृषि विज्ञान केंद्रों और किसानों के खेतों के बीच उत्पादन अंतर को कम करने के साथ उन्नत संकर बीजों और जल दक्ष तकनीकों का प्रसार आवश्यक है। इस प्रकार सूरजमुखी की वैज्ञानिक खेती किसानों की आय बढ़ाने और देश में खाद्य तेल उत्पादन को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

आर्थिक लाभ

सूरजमुखी की खेती पर लगभग 20,000-25,000 रुपये प्रति हैक्टर लागत आती है, जबकि इससे 60,000-80,000 रुपये प्रति हैक्टर तक सकल आय प्राप्त की जा सकती है। कम अवधि में तैयार होने के कारण जायद मौसम में सूरजमुखी फसल विविधीकरण तथा भूमि एवं जल संसाधनों के बेहतर उपयोग के लिए उपयोगी विकल्प है।



पूसा शालीमार मक्का हाइब्रिड-1

जयंत एस. भट्ट¹, गणपति मुक्ती¹, दिग्वेन्द्र पाल¹,
जहूर अहमद दर² और चंदु सिंह¹

🌱 भारत में मक्का (जिया मेज एल.) प्रमुख खाद्यान्न फसलों में से एक है। इसका उपयोग मानव आहार, पशु आहार, कुक्कुट पालन तथा स्टार्च, तेल, ग्लूकोज और विभिन्न प्रसंस्कारित उत्पादों के निर्माण में व्यापक रूप से किया जाता है। बदलती जलवायु, सीमित कृषि संसाधनों और पर्वतीय क्षेत्रों की विशिष्ट परिस्थितियों को देखते हुए ऐसी संकर किस्मों की आवश्यकता बढ़ रही है, जो कम तापमान और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी स्थिर एवं अधिक उपज दे सकें। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली और शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, जम्मू के संयुक्त प्रयासों से 'पूसा शालीमार मक्का हाइब्रिड-1 (पीएसएमएच-1)' को विकसित किया गया है। वर्ष 2024 में अधिसूचित यह संकर जम्मू-कश्मीर के मैदानी एवं पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इसकी उच्च उपज क्षमता, कम अवधि में पकने, प्रमुख रोगों के प्रति सहनशीलता तथा बहुफसली प्रणाली में उपयुक्तता इसे किसानों के लिए उपयोगी विकल्प बनाती है। 🌱

¹भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012; ²शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, जम्मू

पर्वतीय क्षेत्रों में मक्का किसानों की आजीविका और कृषि अर्थव्यवस्था से जुड़ी महत्वपूर्ण फसल है। विशेषकर जम्मू-कश्मीर में कम तापमान, असमान वर्षा, सीमित सिंचाई सुविधाएं और छोटी जोत जैसी परिस्थितियां मक्का उत्पादन को प्रभावित करती हैं। ऐसे में इन परिस्थितियों के अनुकूल और बेहतर उपज देने वाली संकर किस्मों का विकास आवश्यक है। इसी दिशा में विकसित 'पूसा शालीमार मक्का हाइब्रिड-1' बेहतर अनुकूलन क्षमता, उच्च उपज और गुणवत्तापूर्ण दानों के कारण किसानों के लिए उपयोगी विकल्प है।

प्रमुख विशेषताएं

'पूसा शालीमार मक्का हाइब्रिड-1' मध्यम अवधि में पकने वाली उच्च उत्पादक संकर किस्म है। यह कम तापमान और पर्वतीय परिस्थितियों में भी बेहतर प्रदर्शन करने में सक्षम है। इसके पौधे मजबूत, समान वृद्धि वाले और गिरने के प्रति अपेक्षाकृत सहनशील होते हैं। भुट्टे अच्छी तरह भरे हुए तथा दाने चमकीले पीले, ठोस और समान आकार के होते हैं, जिससे इनकी बाजार में अच्छी स्वीकार्यता रहती है।

यह संकर पत्ती झुलसा और तना सड़न जैसे प्रमुख रोगों के प्रति सहनशील है। इससे रोग प्रबंधन पर होने वाले खर्च को कम करने में सहायता मिल सकती है। मध्यम अवधि में पकने के कारण इसे बहुफसली फसल प्रणाली में भी आसानी से शामिल किया जा सकता है।

पौधे एवं भुट्टे की विशेषताएं

इस संकर के पौधों की ऊंचाई सामान्यतः 180-220 सें.मी. होती है। तना मजबूत एवं मोटा होने के कारण तेज हवा अथवा वर्षा की स्थिति में पौधों के गिरने की आशंका कम रहती है। इसकी प्रारंभिक वृद्धि तेज होती है, जिससे पौधे खरपतवारों के साथ बेहतर प्रतिस्पर्धा कर पाते हैं।

इसके भुट्टे मध्यम आकार के, बेलनाकार और अच्छी तरह भरे हुए होते हैं। भुट्टे में दानों की पंक्तियां समान रूप से व्यवस्थित होती हैं तथा दानों की संख्या अधिक होती है। भुट्टे का आवरण घना होने से दानों को कीटों और प्रतिकूल मौसम से सुरक्षा मिलती है। ये विशेषताएं इसकी बेहतर उत्पादन क्षमता में सहायक हैं।

उपयुक्त जलवायु एवं मृदा

'पूसा शालीमार मक्का हाइब्रिड-1' की खेती के लिए अच्छी जल निकासी वाली दोमट अथवा बलुई दोमट मृदा उपयुक्त होती

उपज

अनुशासित कृषि तकनीकों को अपनाने पर 'पूसा शालीमार मक्का हाइब्रिड-1' से लगभग 60-80 क्विंटल प्रति हैक्टर दाना उपज प्राप्त की जा सकती है, जो कई स्थानीय किस्मों की तुलना में लगभग दो से तीन गुना अधिक हो सकती है। कम अवधि में पकने के कारण इसे बहुफसली प्रणाली में शामिल कर भूमि का बेहतर उपयोग किया जा सकता है। साथ ही, रोगों एवं कीटों के प्रति सहनशीलता के कारण पौध संरक्षण पर होने वाले खर्च को कम करने में सहायता मिल सकती है।

है। मृदा का पीएच मान 5.5-7.5 के बीच होना चाहिए। जलभराव फसल के लिए हानिकारक है, इसलिए खेत में उचित जल निकासी आवश्यक है।

यह संकर 20-30 डिग्री सेल्सियस तापमान पर बेहतर प्रदर्शन करती है, जबकि अंकुरण के लिए 18-22 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। फसल की अच्छी वृद्धि के लिए पर्याप्त धूप तथा लगभग 500-800 मि.मी. वर्षा अथवा आवश्यकतानुसार सिंचाई लाभकारी होती है।

बुआई का समय एवं बीज दर

जम्मू-कश्मीर तथा समान जलवायु वाले पर्वतीय क्षेत्रों में खरीफ मौसम के दौरान इसकी बुआई सामान्यतः मई के अंतिम सप्ताह से जून तक की जाती है। अपेक्षाकृत गर्म क्षेत्रों में बुआई जून से जुलाई के मध्य तक की जा सकती है।

उचित पौध संख्या बनाए रखने के लिए 18-20 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त



उच्च उपज-बेहतर गुणवत्ता

होता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60-75 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20-25 सें.मी. रखने पर लगभग 65,000-80,000 पौधे प्रति हैक्टर स्थापित किए जा सकते हैं। उचित दूरी रखने से पौधों को पर्याप्त प्रकाश, पानी एवं पोषक तत्व मिलते हैं और रोगों की आशंका भी कम होती है।

उर्वरक प्रबंधन

बेहतर उत्पादन के लिए संतुलित पोषण प्रबंधन आवश्यक है। सामान्य अनुशांसा के अनुसार प्रति हैक्टर लगभग 200 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 कि.ग्रा. पोटैश का प्रयोग किया जाता है। इसके साथ लगभग 10 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट का उपयोग भी लाभकारी होता है।

नाइट्रोजन को विभाजित मात्रा में देना अधिक प्रभावी रहता है, जबकि फॉस्फोरस एवं पोटैश की पूरी मात्रा बुआई के समय आधार खाद के रूप में दी जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त 8-10 टन प्रति हैक्टर अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट के प्रयोग से मृदा की संरचना, जैविक सक्रियता और पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार होता है। मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करने से पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग और उत्पादन लागत कम करने में सहायता मिलती है।

सिंचाई प्रबंधन

मक्का में अंकुरण, घुटना अवस्था, फूल आने और दाना भरने की अवस्थाएं नमी की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती हैं। इन अवस्थाओं

में नमी की कमी से परागण और दानों का विकास प्रभावित हो सकता है। जहां पर्याप्त वर्षा न हो, वहां आवश्यकतानुसार समय पर सिंचाई करनी चाहिए। नमी संरक्षण के लिए पलवार, मेड़बंदी और उचित खेत समतलीकरण भी उपयोगी हैं।

खरपतवार प्रबंधन

फसल के शुरुआती 30-40 दिन खरपतवार प्रबंधन की दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं। पहली निराई-गुड़ाई, बुआई के 20-25 दिनों बाद और दूसरी लगभग 40 दिनों बाद करनी चाहिए। खरपतवारों का प्रकोप अधिक होने पर अनुशासित खरपतवारनाशी का सुरक्षित एवं उचित मात्रा में प्रयोग किया जा सकता है। पलवार और समय पर निराई-गुड़ाई से खरपतवार प्रबंधन के साथ मृदा नमी के संरक्षण में भी सहायता मिलती है।

'पूसा शालीमार मक्का हाइब्रिड-1' पर्वतीय एवं शीतोष्ण क्षेत्रों के लिए विकसित उच्च उत्पादक संकर है। इसकी बेहतर उपज क्षमता, रोग सहनशीलता, कम अवधि में पकने और गुणवत्तापूर्ण दानों जैसी विशेषताएं इसे किसानों के लिए उपयोगी बनाती हैं। समय पर बुआई, संतुलित पोषण, उचित सिंचाई और खरपतवार प्रबंधन जैसी अनुशासित कृषि तकनीकों को अपनाकर किसान इसकी उत्पादन क्षमता का बेहतर लाभ उठा सकते हैं। यह संकर पर्वतीय क्षेत्रों में मक्का उत्पादन और किसानों की आय बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

उपयोगिता

जम्मू-कश्मीर सहित पर्वतीय एवं शीतोष्ण क्षेत्रों के किसानों के लिए यह संकर उपयोगी विकल्प है। इसकी बेहतर अनुकूलन क्षमता कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में भी उत्पादन बनाए रखने में सहायक है। गुणवत्तापूर्ण दानों के कारण बेहतर बाजार मूल्य मिलने की संभावना रहती है। इसके दानों का उपयोग मानव आहार, पशु आहार और औद्योगिक प्रसंस्करण में किया जा सकता है। कम अवधि में तैयार होने के कारण किसान इसके बाद दूसरी फसल लेकर फसल विविधीकरण और अपनी आय बढ़ा सकते हैं।



पराली से बायोचार बनाकर बढ़ाएं आय

मैनाक खा¹ और देवाशीष गोलुई²

॥ फसल कटाई उपरांत शेष पराली और अन्य फसल अवशेषों को खुले में जलाने से वायु प्रदूषण बढ़ने के साथ कार्बन एवं पोषक तत्वों की हानि होती है और मृदा स्वास्थ्य भी प्रभावित होता है। इन फसल अवशेषों को सीमित ऑक्सीजन की उपस्थिति में पायरोलिसिस प्रक्रिया द्वारा बायोचार में बदला जा सकता है। बायोचार कार्बन-समृद्ध और छिद्रयुक्त पदार्थ है, जो उचित मात्रा और अनुकूल मृदा परिस्थितियों में जल एवं पोषक तत्वों को बनाए रखने, मृदा कार्बन बढ़ाने तथा कुछ परिस्थितियों में फसल उत्पादकता में सुधार करने में सहायक हो सकता है। बायोचार रासायनिक उर्वरकों का पूर्ण विकल्प नहीं है। इसलिए इसका उपयोग मृदा परीक्षण, फसल की आवश्यकता और बायोचार की गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए। इस प्रकार पराली और अन्य फसल अवशेषों को अपशिष्ट समझने के बजाय उपयोगी कृषि संसाधन में बदला जा सकता है। प्रस्तुत लेख में बायोचार की अवधारणा, स्थानीय स्तर पर इसके उत्पादन की सरल विधियों, आवश्यक सुरक्षा उपायों, जैविक खाद के साथ बायोचार उपयोग, प्रयोग की उचित मात्रा और इससे जुड़े आर्थिक अवसरों की जानकारी दी गई है। ॥

फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन आज खेती की प्रमुख आवश्यकताओं में से एक है। धान सहित विभिन्न फसलों की कटाई के बाद खेतों में बड़ी मात्रा में पराली

और अन्य अवशेष बचते हैं। अगली फसल के लिए खेत जल्दी तैयार करने के उद्देश्य से कई स्थानों पर इन्हें जला दिया जाता है। विशेष रूप से उत्तर भारत के धान उत्पादक

क्षेत्रों में पराली जलाने की समस्या अधिक देखी जाती है।

पराली जलाने से धुआं, सूक्ष्म कण (पीएम 2.5), कार्बन मोनोऑक्साइड तथा अन्य प्रदूषक वायुमंडल में उत्सर्जित होते हैं। इसके साथ ही फसल अवशेषों में मौजूद कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों की हानि होती है तथा

¹पर्यावरण विज्ञान एवं इंजीनियरिंग विद्यालय, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर-721302 (पश्चिम बंगाल); ²वरिष्ठ वैज्ञानिक, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

मृदा के जैविक गुण प्रभावित हो सकते हैं। इन अवशेषों को जलाने के बजाय सीमित ऑक्सीजन की उपस्थिति में नियंत्रित तापमान पर गर्म किया जाता है। इस पायरोलिसिस प्रक्रिया से कार्बन समृद्ध बायोचार तैयार होता है।

बायोचार एक कार्बन समृद्ध, छिद्रयुक्त और अपेक्षाकृत स्थायी पदार्थ है। इसे फसल अवशेषों, लकड़ी, भूसी, बागवानी अवशेषों तथा अन्य उपयुक्त जैविक पदार्थों को सीमित ऑक्सीजन की उपस्थिति में गर्म करके तैयार किया जाता है। बायोचार को सामान्य राख से अलग समझना आवश्यक है। खुले में अवशेष जलाने पर कार्बन का अधिकांश भाग गैसों के रूप में वायुमंडल में चला जाता है, जबकि पायरोलिसिस प्रक्रिया में कार्बन का एक हिस्सा अपेक्षाकृत स्थिर रूप में बायोचार में बना रहता है।

बायोचार का प्रभाव कच्चे माल, उत्पादन तापमान एवं विधि, मृदा के प्रकार, जलवायु और प्रयोग की मात्रा पर निर्भर करता है। इसलिए अलग-अलग परिस्थितियों में इसके परिणाम भिन्न हो सकते हैं।

कम लागत में तैयार करें बायोचार

बायोचार बनाने के लिए हमेशा महंगे संयंत्रों की आवश्यकता नहीं होती। किसान स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों और उपयुक्त तकनीक की मदद से कम लागत में भी बायोचार तैयार कर सकते हैं। इसके लिए सुरक्षित विधि अपनाना आवश्यक है।

गड्ढा विधि

सुरक्षित स्थान पर गड्ढा बनाकर उसमें



मृदा में बायोचार के प्रमुख प्रभाव

सूखे फसल अवशेष रखे जाते हैं। इन अवशेषों को सीमित ऑक्सीजन की उपस्थिति में नियंत्रित रूप से गर्म किया जाता है, ताकि वे पूरी तरह राख में न बदलें और कार्बनयुक्त बायोचार प्राप्त हो सके। पर्याप्त बायोचार बनने के बाद पानी या मृदा की सहायता से प्रक्रिया को पूरी तरह रोक दिया जाता है।

ड्रम या छोटी भट्ठी विधि

ड्रम आधारित या छोटी पोर्टेबल भट्ठियों में तापमान और ऑक्सीजन की उपलब्धता को अपेक्षाकृत बेहतर ढंग से नियंत्रित किया जा सकता है। उपकरण का चयन उसकी क्षमता, उपलब्ध कच्चे माल और सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए। बायोचार तैयार करने से पहले स्थानीय कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके) या कृषि विश्वविद्यालय से तकनीकी मार्गदर्शन लेना उपयोगी है।

बायोचार बनाने के लिए फसल अवशेष अच्छी तरह सूखे होने चाहिए। प्लास्टिक, रबर, पेंट लगी लकड़ी, रसायनयुक्त कचरे या अन्य दूषित सामग्री का उपयोग नहीं करना चाहिए। रोगग्रस्त फसल अवशेषों का उपयोग भी सावधानीपूर्वक करना चाहिए। बायोचार हमेशा सुरक्षित एवं नियंत्रित स्थान पर तैयार करें तथा आग बुझाने के लिए पानी या मृदा पास रखें। तैयार बायोचार को पूरी तरह ठंडा होने के बाद ही संभालें। अत्यधिक तापमान और अनियंत्रित दहन से बचें। केवल पदार्थ का काला रंग उसकी गुणवत्ता का प्रमाण नहीं है। बायोचार की गुणवत्ता कच्चे माल और उत्पादन प्रक्रिया पर भी निर्भर करती है।

उपयोग

बायोचार को सीधे खेत में डालने के

लाभ

जल धारण क्षमता में सुधार: बायोचार की छिद्रयुक्त संरचना मृदा में पानी को रोककर रखने में सहायक हो सकती है। इसका लाभ विशेष रूप से रेतीली, हल्की और वर्षा आधारित मृदा में अधिक हो सकता है।

पोषक तत्वों का बेहतर संरक्षण: बायोचार का अधिक सतही क्षेत्रफल और धनायन विनिमय क्षमता (सीईसी) अमोनियम, पोटेशियम, कैल्शियम तथा मैग्नीशियम जैसे पोषक तत्वों को मृदा में बनाए रखने में सहायक हो सकती है। इससे पोषक तत्वों की हानि कम करने में मदद मिल सकती है।

सूक्ष्मजीवों के लिए लाभकारी: बायोचार की सूक्ष्म छिद्रयुक्त संरचना लाभकारी सूक्ष्मजीवों को सक्रिय रहने के लिए अनुकूल वातावरण उपलब्ध करवा सकती है। कम्पोस्ट या जैविक खाद के साथ इसका प्रयोग इस प्रभाव को और बेहतर बना सकता है।

अम्लीय मृदा में सुधार: अनेक प्रकार के बायोचार क्षारीय प्रकृति के होते हैं और अम्लीय मृदा का पीएच बढ़ाने में सहायक हो सकते हैं। हालांकि, पहले से क्षारीय, लवणीय या अधिक पीएच वाली मृदा में इसका प्रयोग मृदा परीक्षण और विशेषज्ञ की सलाह के आधार पर करना चाहिए।

मृदा कार्बन में वृद्धि: बायोचार में मौजूद अपेक्षाकृत स्थिर कार्बन मृदा में लंबे समय तक बना रह सकता है। इस कारण बायोचार मृदा में कार्बन के दीर्घकालिक संचयन में योगदान दे सकता है।

बजाय उपयोग से पहले उसकी चार्जिंग करना लाभकारी हो सकता है। इसके लिए बारीक बायोचार को अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद, कम्पोस्ट या वर्मीकम्पोस्ट के साथ मिलाकर कुछ समय के लिए रखा जा सकता है। इससे बायोचार के छिद्रों में पोषक तत्व और जैविक पदार्थ समाहित हो जाते हैं।

प्रयोग की मात्रा

बायोचार की कोई एक निश्चित मात्रा सभी फसलों और मृदा के लिए उपयुक्त नहीं होती। इसलिए शुरुआत कम मात्रा से करनी चाहिए और मृदा परीक्षण, फसल की आवश्यकता तथा बायोचार की गुणवत्ता के आधार पर मात्रा निर्धारित करनी चाहिए। कुछ अध्ययनों में 2-5 टन प्रति हैक्टर की मात्रा के सकारात्मक प्रभाव देखे गए हैं, लेकिन इसे सभी परिस्थितियों के लिए सामान्य सिफारिश नहीं माना जा सकता। बड़े क्षेत्र में प्रयोग से पहले छोटे क्षेत्र में इसका परीक्षण करना उचित है।

उर्वरकों का विकल्प नहीं

बायोचार नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटैश (एनपीके) उर्वरकों या अन्य आवश्यक पोषक तत्वों का पूर्ण विकल्प नहीं है। इसका उपयोग मुख्य रूप से मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में सुधार और पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता बढ़ाने में सहायक हो सकता है। इसलिए बायोचार का प्रयोग मृदा परीक्षण आधारित संतुलित उर्वरक प्रबंधन, जैविक खाद और उचित सिंचाई प्रबंधन के साथ करना चाहिए।

सिफारिशें

अधिक क्षारीय, लवण या सोडिक

अतिरिक्त आय

पराली को जलाने के बजाय बायोचार में बदलकर उपयोगी कृषि संसाधन बनाया जा सकता है। किसान इसका उपयोग अपने खेत में कर सकते हैं या स्थानीय स्तर पर इसकी बिक्री कर अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं। किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) के माध्यम से सामूहिक रूप से बायोचार उत्पादन इकाई स्थापित करना और फसल अवशेष प्रबंधन से जुड़ी सेवाएं उपलब्ध करवाना भी आय के संभावित विकल्प हो सकते हैं। इसके अलावा, निर्धारित मानकों, पंजीकरण, मापन और सत्यापन संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने पर कार्बन क्रेडिट से आय की संभावना भी हो सकती है।



पराली अवशेष नहीं उपयोगी है

सारणी: पराली जलाने और बायोचार बनाने का तुलनात्मक विवरण

पहलू	पराली जलाना	बायोचार बनाना
मृदा कार्बन	कार्बन का बड़ा भाग वायुमंडल में उत्सर्जित	अपेक्षाकृत स्थिर कार्बन मृदा में बना रह सकता है
वायु प्रदूषण	धुआं एवं प्रदूषकों का उत्सर्जन अधिक	नियंत्रित पायरोलिसिस से उत्सर्जन कम किया जा सकता है
पोषक तत्व	कई पोषक तत्वों की हानि	कुछ पोषक तत्व बायोचार में बने रह सकते हैं
अतिरिक्त आय	प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ नहीं	उपयोग एवं बिक्री से आय की संभावना
दीर्घकालिक प्रभाव	कार्बन एवं कार्बनिक पदार्थों की हानि	मृदा कार्बन संचयन में सहायक

मृदा में बायोचार का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करें। एक साथ अधिक मात्रा में बायोचार डालने से बचें और दूषित फसल अवशेषों से बायोचार न बनाएं। शुरुआत में खेत के छोटे हिस्से में इसका प्रयोग कर परिणाम देखें। आवश्यकता के अनुसार मृदा के पीएच और विद्युत चालकता (ईसी) की जांच भी करवाएं।

बायोचार उपयोग

बायोचार तैयार करने के लिए फसल अवशेषों को नियंत्रित पायरोलिसिस प्रक्रिया से गुजारा जाता है। तैयार बायोचार को कम्पोस्ट या जैविक खाद के साथ चार्ज करने के बाद मृदा परीक्षण के आधार पर उचित मात्रा में खेत में प्रयोग किया जा सकता है। इसके प्रयोग के बाद फसल की वृद्धि और मृदा स्वास्थ्य में होने वाले बदलावों की नियमित निगरानी करनी चाहिए।

पराली को जलाने के बजाय उपयोगी संसाधन के रूप में प्रयोग करें। बायोचार बनाने के लिए सुरक्षित एवं उपयुक्त तकनीक अपनाएं और इसकी गुणवत्ता का ध्यान रखें। उपयोग

से पहले इसे कम्पोस्ट या जैविक खाद के साथ चार्ज करें। शुरुआत छोटे क्षेत्र से करें तथा मृदा परीक्षण और फसल के प्रदर्शन के आधार पर प्रयोग की मात्रा तय करें। किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) या किसान समूह के माध्यम से सामूहिक उत्पादन एवं विपणन की संभावनाएं भी खोजी जा सकती हैं।

पराली स्वयं समस्या नहीं, बल्कि उसका अनुचित प्रबंधन समस्या बन सकता है। फसल अवशेषों को खुले में जलाने के बजाय वैज्ञानिक विधि से बायोचार में बदलना मृदा स्वास्थ्य सुधारने, संसाधनों के पुनर्चक्रण और पर्यावरण संरक्षण की दिशा में उपयोगी विकल्प हो सकता है। बायोचार मृदा में कार्बन संचयन के साथ जल एवं पोषक तत्वों के संरक्षण में सहायक हो सकता है। हालांकि, इसके प्रभाव कच्चे माल, उत्पादन प्रक्रिया, बायोचार की गुणवत्ता, मृदा के प्रकार और प्रयोग की मात्रा पर निर्भर करते हैं। इसलिए बायोचार का उपयोग मृदा परीक्षण और स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप करना चाहिए।



सरसों की उन्नत किस्म 'आरएच-1706' से बढ़ी आमदनी

एम.एस. मीना¹, जे.पी. मिश्र² और स्नेहा राठोर³

हरियाणा के रोहतक जिले के बलियाना गांव के प्रगतिशील किसान श्री जय कुमार ने पारंपरिक धान-गेहूं फसल प्रणाली से आगे बढ़कर फसल विविधीकरण और वैज्ञानिक खेती की दिशा में कदम बढ़ाया। सरसों की उन्नत प्रजाति आरएच-1706 के साथ एकीकृत फसल प्रबंधन तकनीकों को अपनाकर उन्होंने न केवल सरसों की उपज और लाभ में वृद्धि की, बल्कि मृदा के स्वास्थ्य और उपलब्ध संसाधनों के बेहतर उपयोग की दिशा में भी सार्थक प्रयास किया। उनका अनुभव दर्शाता है कि उन्नत प्रजाति, संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन तथा खरपतवार, कीट एवं रोगों के वैज्ञानिक प्रबंधन से सरसों की खेती को अधिक उत्पादक और लाभकारी बनाया जा सकता है। श्री जय कुमार की यह पहल क्षेत्र के अन्य किसानों के लिए फसल विविधीकरण और वैज्ञानिक सरसों उत्पादन का एक उपयोगी उदाहरण प्रस्तुत करती है।

हरियाणा देश का एक प्रमुख कृषि राज्य है, जहां धान-गेहूं की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है और इसका देश की खाद्य सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान है। हालांकि, लंबे समय से एक ही फसल प्रणाली अपनाने और कृषि आदानों के अधिक प्रयोग से मृदा की गुणवत्ता एवं संसाधन उपयोग दक्षता प्रभावित हुई है। इससे खेती की लागत बढ़ने के साथ किसानों की आय पर भी प्रभाव पड़ा है। ऐसे में फसल विविधीकरण के लिए तिलहन

¹प्रधान वैज्ञानिक; ²निदेशक एवं ³वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता, भाकृअनुप-कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान, क्षेत्र-II, जोधपुर-342005

और दलहन फसलों को शामिल करना आवश्यक है।

रोहतक जिला उत्तर-पश्चिमी भारत के अर्धशुष्क कृषि जलवायु क्षेत्र में स्थित है, जहां की बलुई दोमट मृदा और जलवायु सरसों की खेती के लिए उपयुक्त है। कई किसान अभी भी सरसों की प्रचलित किस्मों और पारंपरिक कृषि पद्धतियों को अपना रहे हैं, जिससे उपज और लाभ प्रभावित होते हैं। साथ ही खरपतवार, रोग एवं कीट भी उत्पादन में बाधक हैं। ऐसे में उन्नत किस्मों के साथ एकीकृत फसल प्रबंधन अपनाना उपयोगी है। धान-सरसों-ग्रीष्मकालीन मूंग फसल प्रणाली

धान-गेहूं फसल प्रणाली का उपयोगी विकल्प बनकर उत्पादन, मृदा के स्वास्थ्य और किसानों की आय में सुधार कर सकती है।

श्री जय कुमार, रोहतक जिले की सांपला तहसील के बलियाना गांव के प्रगतिशील किसान हैं। इनके पास 3 हैक्टर बलुई दोमट भूमि है, जो विभिन्न फसलों की खेती के लिए उपयुक्त है। पहले वे क्षेत्र के अन्य किसानों की तरह पारंपरिक धान-गेहूं फसल प्रणाली अपनाते थे। लगातार इस फसल प्रणाली को अपनाने से मृदा की उर्वरता प्रभावित हो रही थी और खेती से अपेक्षित आय भी प्राप्त नहीं हो पा रही थी।

‘आरएच-1706’ विशेष किस्म

- ‘आरएच-1706’ की संभावित उपज 3,364 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर है तथा इसके बीज मोटे और आकर्षक होते हैं।
- इसमें तेल की मात्रा 38.0-39.7 प्रतिशत तथा इरुसिक अम्ल की मात्रा 2 प्रतिशत से कम होती है।
- यह किस्म येलो मोजैक वायरस के लिए प्रतिरोधी तथा प्रमुख रोगों एवं माहू के प्रति सहनशील है।
- यह लगभग 140 दिनों में पककर तैयार हो जाती है, इसलिए इसे विभिन्न फसल प्रणालियों में आसानी से शामिल किया जा सकता है।
- अपेक्षाकृत कम अवधि में पकने और बेहतर उत्पादन क्षमता के कारण यह किस्म किसानों के लिए लाभकारी विकल्प हो सकती है।

कम उत्पादकता के प्रमुख कारणों में पुरानी किस्मों का उपयोग, खरपतवारों का प्रकोप और पोषक तत्वों का उचित प्रबंधन न होना शामिल था। इसके अलावा रोगों और माहू के प्रकोप से भी फसल को नुकसान होता था। इन समस्याओं के समाधान और खेती को अधिक लाभकारी बनाने के लिए श्री जय कुमार ने सरसों की उन्नत प्रजाति ‘आरएच 1706’ के साथ एकीकृत फसल प्रबंधन तकनीकों को अपनाया, जिससे उनकी सरसों की खेती में सकारात्मक बदलाव की शुरुआत हुई।

उत्पादन तकनीक

प्रदर्शन के दौरान सरसों की बेहतर उपज के लिए अनुशंसित उत्पादन तकनीकों को अपनाया गया। बुआई से पहले बीज को कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत बेटेबल पाउडर, फॉस्फेट सॉल्युबिलाइजिंग बैक्टीरिया और एजोटोबैक्टर से उपचारित किया गया। खरपतवार नियंत्रण के लिए पेंडीमेथीलिन का प्रयोग किया गया, जिससे खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण होने के साथ मानव श्रम की आवश्यकता भी कम हुई। संतुलित पोषण के लिए नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की अनुशंसित मात्रा 24:8:0 के अनुपात में दी गई। ऑल्टरनेरिया झुलसा रोग के नियंत्रण के लिए समय पर मैकोजेब और कार्बेण्डाजिम का छिड़काव किया गया।

पूरी फसल अवधि के दौरान वैज्ञानिकों ने खेत का नियमित निरीक्षण कर किसान को आवश्यक तकनीकी सलाह एवं खेत पर

नई तकनीक का प्रयोग

सरसों की उपज बढ़ाने के उद्देश्य से रबी 2025-26 के दौरान रोहतक जिले में कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा तिलहन पर समूह अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन आयोजित किए गए। ये प्रदर्शन भारत सरकार के खाद्य तेल-तिलहन पर राष्ट्रीय मिशन (एनएमईओ-ओएस) के अंतर्गत किए गए, जिसका उद्देश्य प्रमुख तिलहनी फसलों के घरेलू उत्पादन को बढ़ावा देना और खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता की दिशा में आगे बढ़ना है।

- सरसों की उन्नत प्रजाति ‘आरएच 1706’, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा विकसित की गई है।
- किसान के खेत पर कृषि विज्ञान केंद्र के वैज्ञानिकों द्वारा इस प्रजाति का एकीकृत फसल प्रबंधन तकनीकों के साथ प्रदर्शन किया गया। प्रदर्शन के अंतर्गत उन्नत बीज एवं अन्य आदानों के लिए योजना के प्रावधानों के अनुसार अधिकतम 9,000 रुपये प्रति हैक्टर तक सहायता दी गई, जबकि शेष आदानों का खर्च किसान ने सहभागिता के आधार पर वहन किया।
- मृदा के स्वास्थ्य में सुधार, संसाधनों के बेहतर उपयोग और किसानों की आय बढ़ाने के उद्देश्य से धान-सरसों-ग्रीष्मकालीन मूंग फसल प्रणाली अपनाने के लिए भी किसानों को प्रोत्साहित किया गया।

सारणी: किसान पद्धति एवं सामूहिक अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन का तुलनात्मक विवरण

विवरण	किसान पद्धति	प्रदर्शन	वृद्धि (प्रतिशत)
उपज (कि.ग्रा./हैक्टर)	2,060	2,450	18.9
कुल लागत (रुपये/हैक्टर)	28,640	30,760	-
सकल आय (रुपये/हैक्टर)	1,32,664	1,60,720	-
शुद्ध आय (रुपये/हैक्टर)	1,04,024	1,29,960	24.9
लाभ:लागत अनुपात	4.63	5.22	-

मार्गदर्शन प्रदान किया। इसके साथ ही किसान प्रशिक्षण, खेत दिवस और प्रदर्शन भ्रमण आयोजित किए गए, जिससे किसानों का ज्ञान और उन्नत तकनीकों के प्रति विश्वास बढ़ा।

प्रदर्शन परिणाम एवं अनुभव

एकीकृत फसल प्रबंधन तकनीकों को अपनाकर श्री जय कुमार ने पारंपरिक खेती से वैज्ञानिक सरसों उत्पादन की ओर कदम बढ़ाया। ‘आरएच-1706’ किस्म की अधिक उपज क्षमता, मोटे बीज, अच्छी तेल गुणवत्ता, कम इरुसिक अम्ल, रोगों एवं येलो मोजैक वायरस के प्रतिरोध तथा माहू के प्रति सहनशीलता के कारण उन्हें बेहतर परिणाम प्राप्त हुए। इस प्रदर्शन से सरसों की उपज और लाभ में वृद्धि के साथ फसल विविधीकरण एवं एकीकृत फसल प्रबंधन की उपयोगिता भी सामने आई। बेहतर परिणामों से श्री जय कुमार का उन्नत उत्पादन तकनीकों के प्रति विश्वास बढ़ा और उन्हें वैज्ञानिक पद्धति से सरसों की खेती जारी रखने के लिए प्रोत्साहन मिला।

प्रदर्शन में सरसों की उपज 20.6 क्वंटल प्रति हैक्टर से बढ़कर 24.5 क्वंटल प्रति हैक्टर हो गई, जो 18.9 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाती है। इसी प्रकार शुद्ध आय 1,04,024 रुपये प्रति हैक्टर से बढ़कर 1,29,960 रुपये प्रति हैक्टर हो गई, जिसमें 24.9 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की

गई। लाभ:लागत अनुपात भी 4.63 से बढ़कर 5.22 हो गया। प्रदर्शन के बेहतर परिणामों से लगभग 20 साथी किसानों को भी इस तकनीक को अपनाने के लिए प्रोत्साहन मिला।

समूह अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन से यह स्पष्ट हुआ कि ‘आरएच 1706’ किस्म को एकीकृत फसल प्रबंधन के साथ अपनाने से सरसों की उपज और किसानों की आय में वृद्धि की जा सकती है। धान-गेहूँ की पारंपरिक फसल प्रणाली के स्थान पर धान-सरसों-ग्रीष्मकालीन मूंग फसल प्रणाली अपनाने से उपलब्ध संसाधनों का बेहतर उपयोग करने के साथ मृदा के स्वास्थ्य और खेती की स्थिरता में भी सुधार किया जा सकता है।

सरसों की उन्नत किस्म ‘आरएच-1706’ को एकीकृत फसल प्रबंधन के साथ अपनाकर श्री जय कुमार ने सरसों की उत्पादकता बढ़ाने के साथ अधिक लाभ प्राप्त किया। इन्होंने वैज्ञानिक उत्पादन तकनीकों को अपनाया और अन्य साथी किसानों को भी इन्हें अपनाने के लिए प्रेरित किया। साथी किसानों ने प्रदर्शन के विभिन्न चरणों में सक्रिय भागीदारी की। बेहतर परिणामों के कारण श्री जय कुमार क्षेत्र के अन्य किसानों के लिए प्रेरणास्रोत बने हैं और उन्हें उन्नत सरसों उत्पादन से संबंधित सलाह भी दे रहे हैं। ■



तिलहन उप-उत्पादों से पोषण और मूल्य संवर्धन

प्रद्युम्न यादव, के. सौजन्या, शिवम कुमार सिंह, के.एस.वी.पी. चंद्रिका और जी. सुरेश

🌱 तिलहनी फसलों से तेल निकालने के बाद प्राप्त खली को अक्सर सामान्य उप-उत्पाद माना जाता है, जबकि यह पोषक तत्वों का महत्वपूर्ण स्रोत है। सोयाबीन, मूंगफली, सूरजमुखी, तिल, सरसों, कुसुम, अलसी और अन्य तिलहनों की खलों में प्रोटीन, आहार रेशा, खनिज, विटामिन तथा अनेक जैव-सक्रिय यौगिक पाए जाते हैं। इन पोषक गुणों के कारण खलों का उपयोग पशु एवं मत्स्य आहार के साथ-साथ विभिन्न मूल्य संवर्धित उत्पादों के निर्माण में किया जा सकता है। उचित प्रसंस्करण द्वारा इनमें मौजूद कुछ प्रतिपोषक तत्वों के प्रभाव को कम कर इनकी उपयोगिता और बढ़ाई जा सकती है। खली से प्रोटीन उत्पाद, पोषक पूरक, कार्यात्मक खाद्य उत्पाद, जैव उर्वरक तथा अन्य जैव-आधारित उत्पाद तैयार करने की भी व्यापक संभावनाएं हैं। इस प्रकार तिलहन खली का वैज्ञानिक उपयोग न केवल कृषि औद्योगिक अवशेषों के बेहतर प्रबंधन में सहायक है, बल्कि पोषण सुरक्षा, अतिरिक्त आय और संसाधनों के कुशल उपयोग की दिशा में भी उपयोगी विकल्प बन सकता है। 🌱

तिलहनी फसलों से तेल निकालने के बाद बड़ी मात्रा में खली प्राप्त होती है। सोयाबीन, मूंगफली, सूरजमुखी, तिल, कुसुम, सरसों, रेपसीड, कपास, अलसी, नारियल, भाकृअनुप-भारतीय तिलहन अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद

राइस ब्रान तथा रामतिल (नाइजर) की खली पोषक तत्वों से भरपूर होती हैं। विभिन्न तिलहन खलियों में लगभग 20-50 प्रतिशत तक प्रोटीन पाया जा सकता है, इसलिए इनका उपयोग पशु एवं मत्स्य आहार के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में किया जाता है।

इन खलियों में फेनोलिक्स, फ्लेवोनॉयड्स, टोकाफेरॉल और लिग्नान जैसे जैव-सक्रिय यौगिक भी पाए जाते हैं, जो इनके एंटीऑक्सीडेंट गुणों में योगदान करते हैं। इनसे प्रोटीन आइसोलेट, प्रोटीन कॉन्संट्रेट, प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट, आहार रेशा, कार्यात्मक

मूल्य संवर्धन

तिलहनी खली का मूल्य संवर्धन करके अनेक उपयोगी एवं उच्च-मूल्य उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं। इनमें प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट, जैव सक्रिय पेप्टाइड, आहार रेशा सांद्र, खाद्य फिल्म, जैव-अवक्रमणीय पैकेजिंग सामग्री, एंजाइम, जैव उर्वरक, जैव ईंधन तथा पशु आहार पूरक शामिल हैं। लाभकारी सूक्ष्मजीवों द्वारा किण्वन से कुछ प्रतिपोषक तत्वों की मात्रा कम करने तथा पोषक एवं जैव-सक्रिय घटकों की उपलब्धता बढ़ाने में मदद मिल सकती है। इसी प्रकार एंजाइम आधारित उपचार से प्रोटीन की घुलनशीलता, इमल्सीकरण, झाग बनाने और जल धारण करने जैसे कार्यात्मक गुणों में सुधार किया जा सकता है। इन विशेषताओं के कारण तिलहनी खलियों के बेहतर उपयोग से कृषि-औद्योगिक उप-उत्पादों का मूल्य संवर्धन करने और विभिन्न खाद्य एवं जैव-आधारित उत्पाद विकसित करने की संभावनाएं बढ़ रही हैं।

खाद्य पदार्थ, पोषक पूरक, पशु आहार, जैव उर्वरक तथा अन्य जैव आधारित उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं।

हालांकि, कुछ खलियों में फाइटिक अम्ल, टैनिन, ग्लूकोसाइनोलेट, गॉसिपोल और ट्रिप्सिन अवरोधक जैसे प्रति पोषक तत्व भी पाए जाते हैं। ऊष्मा उपचार, किण्वन, अंकुरण तथा एंजाइम आधारित प्रसंस्करण से इनके प्रभाव को कम किया जा सकता है। इसलिए उचित प्रसंस्करण के माध्यम से तिलहन खली का सुरक्षित और प्रभावी उपयोग उनके मूल्य संवर्धन की संभावनाओं को बढ़ाता है।

सारणी 1. प्रमुख तिलहनी खली की पोषण संरचना एवं महत्व

तिलहनी खली	प्रोटीन (प्रतिशत)	वसा (प्रतिशत)	कच्चा रेशा (प्रतिशत)	कार्बोहाइड्रेट (प्रतिशत)	राख (प्रतिशत)	महत्व
सोयाबीन खली	44-50	1-3	5-7	30-35	6-7	उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन एवं आवश्यक अमीनो अम्लों का अच्छा स्रोत
मूंगफली खली	40-50	6-8	5-7	20-25	4-5	प्रोटीन एवं ऊर्जा का अच्छा स्रोत
सूरजमुखी खली	28-40	1-3	18-25	20-25	5-7	आहार रेशा एवं एंटीऑक्सीडेंट यौगिकों से समृद्ध
तिल खली	30-45	6-10	5-8	20-25	6-8	कैल्शियम, लिग्नान एवं एंटीऑक्सीडेंट यौगिकों का अच्छा स्रोत
कुसुम खली	20-25	2-4	20-30	25-30	5-6	अधिक रेशा एवं मध्यम मात्रा में प्रोटीन युक्त
सरसों खली	32-38	5-8	10-12	20-25	6-7	प्रोटीन एवं सल्फर युक्त अमीनो अम्लों का अच्छा स्रोत
रेपसीड खली	35-40	2-4	10-12	25-30	6-7	संतुलित अमीनो अम्ल संरचना एवं खनिजों का अच्छा स्रोत
कपास बीज खली	30-45	2-5	10-15	20-25	6-7	पशु आहार के लिए प्रोटीन का अच्छा स्रोत
नारियल खली	18-25	8-12	12-16	35-40	5-6	आहार रेशा एवं वसा का स्रोत
अलसी खली	28-36	6-10	8-10	25-30	5-7	प्रोटीन, लिग्नान एवं अवशिष्ट वसीय अम्लों का स्रोत
राइस ब्रान खली	12-18	1-3	7-11	45-50	8-10	आहार रेशा, खनिज एवं जैव-सक्रिय यौगिकों का स्रोत
रामतिल (नाइजर) खली	25-35	4-6	10-14	25-30	5-6	प्रोटीन एवं खनिजों का अच्छा स्रोत



खली में गुणों का खजाना

वैकल्पिक प्रोटीन का उपयोगी स्रोत

तिलहनी खली पौध-आधारित प्रोटीन के एक उपयोगी एवं वैकल्पिक स्रोत के रूप में उभर रही हैं। विश्व स्तर पर प्रोटीन युक्त खाद्य उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण कृषि-औद्योगिक उप-उत्पादों से प्रोटीन प्राप्त करने की संभावनाओं पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। तिलहनी खली इस दृष्टि से उपयोगी कच्चा माल हैं, जिनसे प्राप्त प्रोटीन का उपयोग बेकरी उत्पादों, प्रोटीन पूरकों, मांस के पौध-आधारित विकल्पों, कार्यात्मक पेय तथा पोषक तत्वों से समृद्ध खाद्य उत्पादों के निर्माण में किया जा सकता है। एंजाइम आधारित हाइड्रोलाइसिस, किण्वन, एक्सट्रूजन तथा मेम्ब्रेन पृथक्करण जैसी आधुनिक प्रसंस्करण तकनीकों के माध्यम से तिलहनी खली से प्राप्त प्रोटीन की पाचन क्षमता, घुलनशीलता और अन्य कार्यात्मक गुणों में सुधार किया जा सकता है। इससे खाद्य उद्योग में इनके उपयोग की संभावनाएं बढ़ती हैं।

वैश्विक स्तर पर तिलहनों का वार्षिक उत्पादन 680 मिलियन टन से अधिक है, जिसमें लगभग 420 मिलियन टन का योगदान अकेले सोयाबीन का है। इसके बाद रेपसीड, सूरजमुखी, मूंगफली, कपास बीज, तिल, अलसी तथा कुसुम प्रमुख हैं। भारत भी विश्व के प्रमुख तिलहन उत्पादक देशों में शामिल है। देश में सोयाबीन, रेपसीड-सरसों, मूंगफली, तिल,

सूरजमुखी, कुसुम, अरंडी, रामतिल (नाइजर) तथा अलसी प्रमुख तिलहनी फसलें हैं।

विश्व स्तर पर प्रतिवर्ष बड़ी मात्रा में तिलहनी खली का उत्पादन होता है, जिसमें सोयाबीन खली की हिस्सेदारी सबसे अधिक है। भारत में भी सोयाबीन, रेपसीड-सरसों, कपास बीज, मूंगफली, सूरजमुखी तथा तिल से बड़ी मात्रा में खली प्राप्त होती है।

पारंपरिक रूप से इनका उपयोग मुख्यतः पशु आहार और जैविक खाद के रूप में किया जाता रहा है। हाल के वर्षों में इनके पोषण एवं औद्योगिक महत्व को देखते हुए मूल्य संवर्धित उत्पादों के निर्माण में भी इनकी उपयोगिता बढ़ी है। टिकाऊ खाद्य प्रणालियों और पौध-आधारित प्रोटीन की बढ़ती मांग ने तिलहनी खली के बेहतर उपयोग की नई संभावनाएं विकसित की हैं।

पशुपालन एवं कुक्कुट पालन में तिलहनी खली आज भी कम लागत वाले उच्च प्रोटीनयुक्त पशु आहार के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये पशुओं की वृद्धि, दुग्ध एवं अंडा उत्पादन तथा समग्र स्वास्थ्य के लिए आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराती हैं। इसके अतिरिक्त, मत्स्य पालन में भी उच्च पोषण मूल्य और कम लागत के कारण इनका उपयोग लगातार बढ़ रहा है।

खाद्य एवं पशु आहार के अतिरिक्त तिलहनी खली का उपयोग बायोएथेनॉल, बायोगैस, सक्रिय कार्बन तथा जैविक उर्वरकों के उत्पादन में भी किया जा रहा है। इससे कृषि अपशिष्टों का बेहतर उपयोग होने के साथ-साथ परिपत्र जैव-अर्थव्यवस्था को भी बढ़ावा मिलता है।

तिलहनी खली में उपयोग की व्यापक संभावनाएं हैं, लेकिन इनमें फाइटिक अम्ल, टैनिन, ग्लूकोसाइनोलेट, गॉसिपोल तथा ट्रिप्सिन अवरोधक जैसे कुछ प्रति पोषक तत्व भी पाए



मूल्य संवर्धन की व्यापक संभावनाएं

पोषक तत्वों का समृद्ध स्रोत

तिलहन और तेल निष्कर्षण की विधि के आधार पर विभिन्न खली में लगभग 20-50 प्रतिशत तक प्रोटीन पाया जा सकता है। वसा रहित सोयाबीन, सूरजमुखी, तिल, मूंगफली तथा कुसुम की खली प्रोटीन और विभिन्न आवश्यक अमीनो अम्लों के अच्छे स्रोत हो सकती हैं। इनमें मौजूद प्रोटीन का उपयोग कॉन्सटेंट, आइसोलेट तथा पौध-आधारित कार्यात्मक खाद्य पदार्थ तैयार करने में किया जा सकता है। तिलहनी खली में आहार रेशा भी पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है, जो पाचन एवं आंतों के स्वास्थ्य के लिए उपयोगी है। इसके अलावा इनमें कैल्शियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम, जिंक और आयरन जैसे खनिज तथा विभिन्न विटामिन पाए जाते हैं। इनमें फेनोलिक्स, फ्लेवोनॉयड्स, टोकाफेरॉल और लिग्नान जैसे जैव-सक्रिय यौगिक भी मौजूद होते हैं। इन यौगिकों में एंटीऑक्सीडेंट सहित विभिन्न जैविक गुण पाए गए हैं। इन्होंने पोषक एवं जैव-सक्रिय घटकों के कारण तिलहनी खली का उपयोग मूल्य संवर्धित खाद्य एवं पोषण उत्पादों के विकास में किया जा सकता है।

सारणी 2. तिलहनी खली से तैयार प्रमुख मूल्य संवर्धित उत्पाद

तिलहनी खली	प्रमुख मूल्य संवर्धित उत्पाद
सोयाबीन खली	प्रोटीन आइसोलेट, सोया आटा, बनावटयुक्त वनस्पति प्रोटीन, प्रोटीन पेय, किण्वित खाद्य उत्पाद एवं पशु आहार
मूंगफली खली	प्रोटीन सांद्र, पोषक तत्वों से समृद्ध बेकरी उत्पाद, स्नैक खाद्य उत्पाद, प्रोटीन पूरक एवं पशु आहार
सूरजमुखी खली	उच्च रेशायुक्त आटा, प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट, खाद्य परत, पोषक तत्वों से समृद्ध बेकरी उत्पाद एवं मत्स्य आहार
तिल खली	पोषक-औषधीय पाउडर, एंटीऑक्सीडेंट युक्त पूरक, प्रोटीन बार, तिल का आटा एवं स्वास्थ्यवर्द्धक खाद्य उत्पाद
कुसुम खली	प्रोटीन युक्त आटा, आहार रेशा पूरक, किण्वित उत्पाद, पशु आहार एवं जैव उर्वरक
सरसों खली	जैविक खाद, जैव उर्वरक, पशु आहार, प्रोटीन उत्पाद एवं बायोगैस उत्पादन
रेपसीड खली	प्रोटीन आइसोलेट, मत्स्य आहार, स्वास्थ्यवर्धक खाद्य सामग्री, किण्वन माध्यम एवं जैव-अवक्रमणीय सामग्री
कपास बीज खली	पशु आहार, प्रोटीन सांद्र, जैविक उर्वरक एवं एंजाइम उत्पादन हेतु माध्यम
नारियल खली	आहार रेशा उत्पाद, बेकरी सामग्री, पशु आहार एवं किण्वित खाद्य उत्पाद
अलसी खली	स्वास्थ्यवर्द्धक बेकरी उत्पाद, पोषक-औषधीय उत्पाद एवं प्रोटीन युक्त खाद्य उत्पाद
राइस ब्रान खली	एंटीऑक्सीडेंट अर्क, आहार रेशा उत्पाद, पोषक-औषधीय उत्पाद, पशु आहार एवं जैव-सक्रिय यौगिक
रामतिल (नाइजर) खली	प्रोटीन पूरक, कुक्कुट आहार, किण्वित उत्पाद एवं जैविक उर्वरक

जाते हैं। आधुनिक प्रसंस्करण तकनीकों, जैसे ऊष्मा उपचार, किण्वन, भिगोने, अंकुरण तथा एंजाइम आधारित संशोधन के माध्यम से इन प्रतिपोषक तत्वों की मात्रा को प्रभावी रूप से कम कर पोषण गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।

समग्र रूप से, तेल निष्कर्षण के बाद प्राप्त तिलहनी खली अत्यंत उपयोगी कृषि-औद्योगिक उप-उत्पाद हैं, जिनका पोषण, आर्थिक और औद्योगिक दृष्टि से विशेष महत्व है। इनमें उपलब्ध उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन, जैव-सक्रिय यौगिक और उपयोगी कार्यात्मक गुण इन्हें टिकाऊ खाद्य प्रणालियों, पोषक-औषधीय उत्पादों, पशु आहार तथा जैव-प्रौद्योगिकी आधारित उत्पादों के विकास के लिए उपयोगी बनाते हैं। तिलहनी खली का वैज्ञानिक उपयोग और मूल्य संवर्धन संसाधनों के बेहतर उपयोग तथा किसानों की आय बढ़ाने में सहायक होने के साथ-साथ पर्यावरणीय स्थिरता और खाद्य सुरक्षा को सुदृढ़ करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।



शून्य जुताई की बढ़ती उपयोगिता

सौरभ कुमार और विकास मिश्रा

“ शून्य जुताई (जीरो टिलेज) आधुनिक एवं टिकाऊ कृषि की एक महत्वपूर्ण मृदा संरक्षण आधारित पद्धति है। इसमें पारंपरिक जुताई किए बिना सीधे फसल की बुआई की जाती है तथा फसल अवशेषों को मृदा की सतह पर बनाए रखा जाता है। यह तकनीक मृदा संरचना एवं उर्वरता बनाए रखने, मृदा क्षरण कम करने, नमी संरक्षित रखने तथा जल उपयोग दक्षता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शून्य जुताई में खेत की बार-बार जुताई की आवश्यकता नहीं होती, जिससे ईंधन, श्रम, समय और मशीनरी पर होने वाले खर्च में कमी आती है। इससे उत्पादन लागत घटती है और किसानों की लाभप्रदता बढ़ सकती है। मृदा की सतह पर फसल अवशेष बने रहने से नमी का वाष्पीकरण कम होता है और मृदा के तापमान को संतुलित रखने में मदद मिलती है। साथ ही, कार्बनिक पदार्थों के संचय और लाभकारी सूक्ष्मजीवों की गतिविधियों को भी बढ़ावा मिलता है। यह पद्धति मृदा में जल एवं पोषक तत्वों के संरक्षण में सहायक होने के साथ-साथ कार्बन संचयन को बढ़ावा देने और जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने में भी योगदान दे सकती है। ”

भारतीय परिस्थितियों में, विशेषकर धान-गेहूं फसल प्रणाली तथा जल और श्रम की कमी वाले क्षेत्रों में, शून्य जुताई एक उपयोगी संसाधन संरक्षणकारी विकल्प है। इसे उचित फसल अवशेष प्रबंधन, फसलचक्र, खरपतवार प्रबंधन और उन्नत बुआई तकनीकों के साथ अपनाकर उत्पादकता एवं आर्थिक दक्षता बढ़ाने के साथ मृदा स्वास्थ्य को भी बेहतर बनाए रखा जा सकता है।

शून्य जुताई (जीरो टिलेज), जिसे अंग्रेजी में नो-टिल खेती भी कहा जाता है, आधुनिक कृषि की एक महत्वपूर्ण मृदा संरक्षण तकनीक है। इसमें मृदा को पलटे या पारंपरिक जुताई किए बिना सीधे बीज की बुआई की

जाती है। इससे मृदा में नमी और कार्बनिक पदार्थों के संरक्षण के साथ मृदा संरचना को बनाए रखने में मदद मिलती है।

मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव

शून्य जुताई और मृदा की सतह पर फसल अवशेष बनाए रखने से मृदा संरचना एवं स्वास्थ्य में सुधार होता है। इससे मृदा अपरदन कम होता है, जल-उपयोग दक्षता बढ़ती है तथा मृदा में नमी का संरक्षण होता है। यह पद्धति मृदा संरचना को बनाए रखने के साथ लाभकारी सूक्ष्मजीवों की गतिविधियों को बढ़ावा देती है और कृषि पारिस्थितिकी तंत्र को अधिक सुदृढ़ बनाने में सहायक होती है। साथ ही, मृदा में कार्बन संचयन बढ़ाकर

यह जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में भी योगदान दे सकती है।

मृदा की सतह पर मौजूद फसल अवशेष दिन के समय अधिक तापमान से मृदा को बचाते हैं, जबकि रात में ऊष्मा के ह्रास को कम कर मृदा तापमान को संतुलित रखने में सहायक होते हैं।

आवश्यक उपकरण एवं यंत्र

शून्य जुताई में ऐसे विशेष कृषि यंत्रों एवं उपकरणों का उपयोग किया जाता है, जिनकी सहायता से मृदा की जुताई या उसे पलटे बिना सीधे बीज की बुआई और उर्वरकों का प्रयोग किया जा सकता है। पारंपरिक जुताई की तुलना में इन यंत्रों को मृदा में न्यूनतम व्यवधान उत्पन्न करते हुए बुआई करने के लिए विकसित किया गया है।

पारंपरिक और शून्य

दोनों पद्धतियों के लाभ और सीमाओं को समझने के लिए उनकी तुलना उपयोगी है। पारंपरिक जुताई में खेत तैयार करने के लिए मृदा को पलटने, डिस्कंग और हैरोइंग जैसी क्रियाएं की जाती हैं। इससे मृदा भुरभुरी होती है, फसल अवशेष एवं कार्बनिक पदार्थ मृदा में मिल जाते हैं और बुआई के लिए उपयुक्त बीज क्यारी तैयार होती है। हालांकि, बार-बार या अधिक जुताई करने से मृदा संरचना प्रभावित हो सकती है तथा मृदा अपरदन, नमी और कार्बनिक पदार्थों की हानि का जोखिम बढ़ सकता है। इसके विपरीत, शून्य जुताई में मृदा में न्यूनतम हस्तक्षेप होता है और फसल अवशेष सतह पर बने रहते हैं। इससे मृदा संरचना और नमी के संरक्षण के साथ सतह पर कार्बनिक पदार्थों के संचय में मदद मिलती है।



जीरो टिल सीड ड्रिल

सारणी: पारंपरिक और शून्य जुताई का तुलनात्मक विवरण

विशेषता	पारंपरिक जुताई	शून्य जुताई
मृदा संरचना	बार-बार जुताई से प्रभावित हो सकती है	संरचना के संरक्षण में सहायक
मृदा अपरदन	अपेक्षाकृत अधिक	अपेक्षाकृत कम
नमी संरक्षण	अपेक्षाकृत कम	अपेक्षाकृत अधिक
कार्बनिक पदार्थ	तेजी से अपघटन के कारण कमी हो सकती है	सतह पर अवशेष रहने से संरक्षण एवं संचय में सहायक
ईंधन एवं श्रम लागत	अपेक्षाकृत अधिक	अपेक्षाकृत कम
सूक्ष्मजीवी गतिविधियां	बार-बार जुताई से प्रभावित हो सकती हैं	अनुकूल वातावरण मिलने से बढ़ सकती हैं
खरपतवार प्रबंधन	जुताई सहित विभिन्न विधियों से	समेकित खरपतवार प्रबंधन आवश्यक

प्लांटर एवं सीडड्रिल: फसल अवशेषों के बीच मृदा में बिना अधिक व्यवधान उत्पन्न किए बीजों को उचित गहराई पर बोने के लिए।

विशेष कल्टर: फसल अवशेषों को काटकर बीज की बुआई के लिए उचित स्थान बनाने हेतु।

सब-सॉइलर: मृदा की निचली कठोर परत को तोड़ने के लिए।

स्प्रेयर: खरपतवार नियंत्रण के लिए शाकनाशियों के छिड़काव हेतु।

हैप्पी सीडर: पिछली फसल के अवशेषों के बीच सीधे बीज की बुआई के लिए।

इन यंत्रों का चयन एवं उपलब्धता क्षेत्र की परिस्थितियों, फसल और खेती की आवश्यकता पर निर्भर करती है। शून्य जुताई पद्धति में पिछली फसल के अवशेषों को खेत की सतह पर बनाए रखा जाता है, जो प्राकृतिक मल्ल के रूप में कार्य करते हैं।

शून्य जुताई की विधियां

इस प्रणाली में खेत की पूर्व जुताई या हैरो चलाए बिना विशेष सीडड्रिल की सहायता से सीधे बीज की बुआई की जाती है। आवश्यकता के अनुसार बुआई के साथ ही उर्वरकों का प्रयोग भी किया जा सकता है। इस पद्धति में मृदा में न्यूनतम व्यवधान होता है और पिछली फसल के अवशेष खेत की सतह पर बने रहते हैं।

शून्य जुताई प्रणाली में फसलचक्र का विशेष महत्व है। उपयुक्त फसलचक्र अपनाने से कीट एवं रोगों के प्रकोप और खरपतवारों के दबाव को कम करने के साथ मृदा स्वास्थ्य बनाए



शून्य जुताई के प्रमुख लाभ

रखने में मदद मिलती है। पिछली फसल के अवशेष खेत की सतह पर ही रहते हैं, इसलिए उनका उचित प्रबंधन आवश्यक है। इसके लिए फसल और उपलब्ध कृषि यंत्रों के अनुसार पहले से योजना बनाना उपयोगी होता है।

उदाहरण के लिए, धान की कटाई के बाद खेत की जुताई किए बिना फसल अवशेषों के बीच सीधे गेहूं की बुआई की जा सकती है। इससे खेत तैयार करने में लगने वाले समय, श्रम, ईंधन और मशीनरी के उपयोग में कमी आती है। साथ ही, फसल अवशेषों को खेत में बनाए रखने से मृदा की नमी और मृदा स्वास्थ्य के संरक्षण में भी मदद मिलती है।

लाभ

लागत में कमी: पारंपरिक जुताई में खेत तैयार करने के लिए ट्रैक्टर एवं कृषि यंत्रों का कई बार उपयोग करना पड़ता है, जिससे ईंधन, श्रम और समय अधिक लगता है। शून्य जुताई में इन क्रियाओं की संख्या कम होने से खेती की लागत घटाई जा सकती है। भाकृअनुप द्वारा प्रकाशित करनाल, हरियाणा के एक किसान के अनुभव के अनुसार, शून्य जुताई अपनाने से गेहूं की उपज प्रभावित हुए बिना जुताई पर लगभग 2,500-2,900 रुपये प्रति हैक्टर की बचत हुई।

मृदा स्वास्थ्य में सुधार

शून्य जुताई में मृदा हस्तक्षेप होता है और फसल अवशेषों को खेत की सतह पर बनाए रखा जा सकता है। इससे मृदा में कार्बनिक कार्बन के संरक्षण, मृदा संरचना में सुधार और लाभकारी सूक्ष्मजीवी गतिविधियों को बढ़ावा मिल सकता है। लंबे समय तक उचित फसल अवशेष प्रबंधन के साथ इस तकनीक को अपनाने से मृदा स्वास्थ्य में सुधार हो सकता है।



हैप्पी सीडर है प्रभावी यंत्र

जल संरक्षण

खेत की सतह पर फसल अवशेष रहने से मृदा से नमी के वाष्पीकरण को कम करने में मदद मिलती है। इससे मृदा में नमी अधिक समय तक बनी रह सकती है और जल-उपयोग दक्षता में सुधार हो सकता है। उचित सिंचाई प्रबंधन के साथ शून्य जुताई अपनाने से जल एवं ऊर्जा की बचत भी की जा सकती है।

उपज एवं लाभप्रदता

शून्य जुताई में समय पर बुआई करने और उत्पादन लागत घटाने की संभावना रहती है। विभिन्न अध्ययनों में शून्य जुताई के अंतर्गत गेहूं की उपज पारंपरिक जुताई के समान या कुछ परिस्थितियों में अधिक पाई गई है। कम लागत और संसाधनों के बेहतर उपयोग के कारण किसानों की शुद्ध आय में वृद्धि की संभावना भी रहती है।

पोषक तत्वों का बेहतर उपयोग

फसल अवशेषों को खेत में बनाए रखने और मृदा में कम व्यवधान होने से मृदा

कार्बनिक पदार्थ एवं पोषक तत्व चक्रण को बढ़ावा मिल सकता है। इससे पोषक तत्वों की उपलब्धता एवं उपयोग दक्षता में सुधार करने में मदद मिलती है। हालांकि, बेहतर परिणामों के लिए संतुलित एवं फसल आवश्यकता आधारित पोषक तत्व प्रबंधन आवश्यक है।

जलवायु परिवर्तन में प्रभावी

शून्य जुताई में खेत तैयार करने के लिए मशीनरी का उपयोग कम होने से ईंधन की खपत और उससे होने वाले कार्बन उत्सर्जन में कमी आ सकती है। साथ ही, फसल अवशेषों को जलाने के बजाय खेत में बनाए रखने से वायु प्रदूषण कम करने में मदद मिलती है। अध्ययनों के अनुसार, उर्वरकों के दक्ष उपयोग, शून्य जुताई और बेहतर जल प्रबंधन जैसी तकनीकों को संयुक्त रूप से अपनाने से भारतीय कृषि में ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन कम करने की पर्याप्त संभावना है।

शून्य जुताई मृदा स्वास्थ्य एवं नमी संरक्षण, उत्पादन लागत में कमी और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने की दृष्टि से कृषि के लिए एक उपयोगी प्रभावी तकनीक है। धान-गेहूं उत्पादक क्षेत्रों में हैप्पी सीडर जैसी तकनीकें फसल अवशेषों के खेत में ही प्रबंधन और गेहूं की समय पर बुआई में सहायक हैं।

हालांकि, शून्य जुताई को व्यापक स्तर पर अपनाने के लिए उपयुक्त कृषि यंत्रों की उपलब्धता, प्रभावी खरपतवार प्रबंधन, तकनीकी प्रशिक्षण और स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप प्रबंधन आवश्यक है। अनुसंधान संस्थानों, प्रसार तंत्र और किसानों के समन्वित प्रयासों से इस तकनीक को अधिक प्रभावी ढंग से अपनाकर टिकाऊ एवं संसाधन-कुशल कृषि को बढ़ावा दिया जा सकता है।

पराली प्रबंधन एवं हैप्पी सीडर

पंजाब और हरियाणा सहित उत्तर-पश्चिम भारत के धान-गेहूं उत्पादक क्षेत्रों में धान की कटाई और गेहूं की बुआई के बीच कम समय उपलब्ध होने के कारण किसान कई बार फसल अवशेषों (पराली) को खेत में जला देते हैं। इससे वायु प्रदूषण के साथ पोषक तत्वों की हानि और मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। पराली के खेत में ही प्रबंधन के लिए हैप्पी सीडर एक उपयोगी कृषि यंत्र है। यह धान के फसल अवशेषों के बीच बिना जुताई किए सीधे गेहूं की बुआई करता है तथा अवशेषों को मृदा की सतह पर मलच के रूप में बनाए रखने में मदद करता है। सतह पर मौजूद यह अवशेष मृदा में नमी के संरक्षण, तापमान को संतुलित रखने और खरपतवारों के दबाव को कम करने में सहायक हो सकता है। इस प्रकार शून्य जुताई और हैप्पी सीडर तकनीक पराली जलाने की आवश्यकता कम करने के साथ संसाधन संरक्षण और टिकाऊ धान-गेहूं उत्पादन प्रणाली को बढ़ावा देने में उपयोगी हो सकती है।



टिकाऊ कृषि हेतु प्रभावी प्राकृतिक खेती

सुशील कुमार शर्मा, नारायण साहू, विनोद कुमार वासनिक, ललित लक्ष्मण खरबीकर और अनिल दीक्षित

प्राकृतिक खेती स्थानीय संसाधनों के उपयोग, मृदा स्वास्थ्य के संरक्षण और खेती की लागत कम करने की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में उभर रही है। इसमें रासायनिक आदानों पर निर्भरता कम करते हुए जैव आदानों, फसल अवशेष, आच्छादन और खेत में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के समुचित उपयोग पर विशेष जोर दिया जाता है। वन एवं जैव विविधता से समृद्ध छत्तीसगढ़ में प्राकृतिक खेती के विस्तार की व्यापक संभावनाएं हैं। राज्य में बड़ी संख्या में लघु एवं सीमांत किसान होने के कारण कम लागत वाली यह कृषि पद्धति उनकी आजीविका को अधिक टिकाऊ बनाने में सहायक हो सकती है। हालांकि, प्राकृतिक खेती को व्यापक स्तर पर अपनाने के लिए गुणवत्तापूर्ण जैव आदान की उपलब्धता, तकनीकी जानकारी, उचित आच्छादन सामग्री और किसानों को निरंतर मार्गदर्शन जैसी चुनौतियों का समाधान भी आवश्यक है। ऐसे में स्थानीय संसाधनों का वैज्ञानिक उपयोग प्राकृतिक खेती को अधिक प्रभावी और व्यावहारिक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

प्राकृतिक खेती की सफलता काफी हद तक खेत और उसके आसपास उपलब्ध स्थानीय संसाधनों के समुचित उपयोग पर निर्भर करती है। इसमें बाहरी रासायनिक आदानों पर निर्भरता कम करते हुए गोबर, गौमूत्र, गुड़, बेसन, स्थानीय मृदा, विभिन्न पौधों की पत्तियों तथा अन्य प्राकृतिक सामग्रियों से अनेक प्रकार के जैव आदान तैयार किए जाते हैं। इनका उपयोग बीज उपचार, पौध पोषण, मृदा की जैविक सक्रियता बढ़ाने तथा कीट एवं रोग प्रबंधन में किया जाता है। किसान इन जैव आदानों को स्थानीय स्तर पर तैयार कर भाकृअनुप-राष्ट्रीय जैविक तनाव प्रबंधन संस्थान, रायपुर (छत्तीसगढ़)

खेती की लागत कम करने के साथ फसल उत्पादन के लिए अनुकूल वातावरण बना सकते हैं।

प्राकृतिक खेती में उपयोग किए जाने वाले ऐसे विभिन्न जैव-आदानों की तैयारी और उपयोग की निम्न विधियां हैं:

बीजामृत

प्राकृतिक खेती में बीज उपचार के लिए बीजामृत का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 5 कि.ग्रा. गोबर, 5 लीटर गौमूत्र, 50 ग्राम चूना, 20 लीटर पानी और 50-100 ग्राम मृदा की आवश्यकता होती है। सबसे पहले गोबर को कपड़े की पोटली में बांधकर 20 लीटर पानी में 24 घंटे तक

डुबोकर रखा जाता है। इसके बाद पोटली निकालकर शेष सामग्री को घोल में अच्छी तरह मिलाया जाता है। तैयार बीजामृत में बीजों को डुबोकर उपचारित किया जाता है और कुछ घंटे छाया में सुखाने के बाद बुआई की जाती है। बीजामृत का उपयोग बीजों के बेहतर अंकुरण में सहायक होता है तथा मृदाजनित रोगों से बचाव में भी मदद करता है।

जीवामृत

प्राकृतिक खेती में उपयोग किया जाने वाला यह एक तरल जैव आदान है। इसे तैयार करने के लिए 100 लीटर पानी, 5 कि.ग्रा. देसी गाय का गोबर, 5 लीटर गौमूत्र, 500 ग्राम बरगद या पीपल के पेड़ के नीचे की

पलवार

प्राकृतिक खेती में पलवार का विशेष महत्व है। खेत की मृदा को फसल अवशेषों, पुआल अथवा जीवित फसलों से ढकने पर मृदा में नमी संरक्षित रहती है और पानी का वाष्पीकरण कम होता है। साथ ही, खरपतवारों की वृद्धि को नियंत्रित करने में भी सहायता मिलती है। पलवार के रूप में उपयोग किए गए जैविक पदार्थ धीरे-धीरे विघटित होकर मृदा में मिल जाते हैं, जिससे मृदा की संरचना और पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार होता है तथा लाभकारी सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को बढ़ावा मिलता है। इससे मृदा में वायु संचार और जल अवशोषण क्षमता बेहतर होती है। पलवार भूमि की सतह तक सूर्य का प्रकाश पहुंचने में बाधा उत्पन्न कर खरपतवारों के अंकुरण और वृद्धि को भी कम करती है। इससे फसल और खरपतवारों के बीच पानी, प्रकाश एवं पोषक तत्वों के लिए होने वाली प्रतिस्पर्धा कम होती है। प्राकृतिक खेती में मुख्य रूप से निम्न तीन प्रकार के आच्छादन अपनाए जाते हैं:

- **मृदा आच्छादन:** मृदा में कम से कम हस्तक्षेप करते हुए लगभग 10-15 सें.मी. की उथली जुताई की जाती है।
- **पुआल/फसल अवशेष आच्छादन:** पिछली फसल के सूखे अवशेषों, पुआल अथवा भूसे को लगभग 5-7 टन प्रति हैक्टर की दर से खेत की सतह पर फैलाया जाता है।
- **जीवित आच्छादन:** मुख्य फसल की पत्तियों के बीच मूंग, उड़द, सोयाबीन और लोबिया जैसी दलहनी फसलों को अंतरफसल अथवा मिश्रित फसल के रूप में उगाया जाता है। इससे भूमि आच्छादित रहने के साथ उपलब्ध संसाधनों का बेहतर उपयोग करने में सहायता मिलती है।

मृदा, 1 कि.ग्रा. गुड़ और 1 कि.ग्रा. बेसन की आवश्यकता होती है। इसे तैयार करने के लिए सबसे पहले गोबर को गौमूत्र में अच्छी तरह मिलाया जाता है। इसके बाद गुड़ और बेसन का घोल बनाकर सभी सामग्रियों को 100 लीटर पानी में मिला दिया जाता है।

अग्निअस्त्र

प्राकृतिक खेती में कीट प्रबंधन के लिए अग्निअस्त्र का उपयोग प्राकृतिक कीटनाशी के रूप में किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 20 लीटर गौमूत्र, 5 कि.ग्रा. नीम की पत्तियों की चटनी, 0.5 कि.ग्रा. तंबाकू, 0.5 कि.ग्रा. तीखी हरी मिर्च और 500 ग्राम लहसुन की चटनी की आवश्यकता होती है। सभी सामग्रियों को मृदा के बर्तन में डालकर चार बार उबाला जाता है। इसके बाद मिश्रण को 48 घंटे तक छाया में रखकर छान लिया जाता है। तैयार अग्निअस्त्र की 5 लीटर मात्रा को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव किया जा सकता है। इसका उपयोग तना एवं फल छेदक इल्लियों के प्रबंधन में किया जाता है। तैयार अग्निअस्त्र को तीन माह तक भंडारित किया जा सकता है।



अग्निअस्त्र बनाने की विधि

तैयार मिश्रण को जूट की बोरी से ढककर 4-6 दिनों तक रखा जाता है और इस दौरान सुबह-शाम लकड़ी की सहायता से अच्छी तरह चलाया जाता है। तैयार जीवामृत को छानकर लगभग 0.5 एकड़ क्षेत्र में सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग किया जा सकता है। सूखे खेत में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। जीवामृत मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों और केंचुओं की सक्रियता बढ़ाने में सहायक होता है तथा पौधों की वृद्धि के लिए अनुकूल मृदा वातावरण तैयार करता है।

घनजीवामृत

यह जीवामृत का ठोस स्वरूप है। इसे तैयार करने के लिए 100 कि.ग्रा. देसी गाय का गोबर, 2 लीटर गौमूत्र, 0.5-1 कि.ग्रा. पेड़ के नीचे की मृदा, 1 कि.ग्रा. गुड़ और 1 कि.ग्रा. बेसन की आवश्यकता होती है। इसे तैयार करने के लिए सबसे पहले पॉलीथीन शीट पर गोबर फैलाकर उसमें मौजूद अवांछित पदार्थों को निकाल दिया जाता है। इसके बाद शेष सभी सामग्रियों को गोबर में मिलाकर आटे की तरह गूथ लिया जाता है।

तैयार मिश्रण को बोरी से ढककर तीन दिनों तक नमी बनाए रखते हुए रखा जाता है। इसके बाद मिश्रण के छोटे-छोटे गोले बनाकर 7-10 दिनों तक छाया में सुखाया जाता है। तैयार घनजीवामृत को छह महीने तक सुरक्षित रखा जा सकता है। बुआई के समय इसका प्रयोग 70-80 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की दर से किया जा सकता है। इसके उपयोग से बाहरी

आदानों पर निर्भरता और उत्पादन लागत कम करने के साथ मृदा की जैविक सक्रियता एवं उर्वरता बढ़ाने में सहायता मिलती है।

ब्रह्मास्त्र

प्राकृतिक खेती में बड़ी इल्लियों के प्रबंधन के लिए ब्रह्मास्त्र का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 10 लीटर गौमूत्र तथा नीम, करंज, सीताफल, बेल, अरंडी और धतूरा आदि में से किन्हीं पांच पौधों की पत्तियों का उपयोग किया जाता है। इसमें नीम की 3 कि.ग्रा. तथा अन्य चयनित पौधों की 2-2 कि.ग्रा. पत्तियों की चटनी तैयार कर गौमूत्र में मिलाई जाती है। इस मिश्रण को अच्छी तरह उबालने के बाद 48 घंटे तक छाया में ठंडा होने के लिए रखा जाता है और फिर छान लिया जाता है। तैयार ब्रह्मास्त्र की 3 लीटर मात्रा को 100 लीटर पानी में मिलाकर 15-21 दिनों के अंतराल पर छिड़काव किया जा सकता है। इसे छह माह तक सुरक्षित रूप से भंडारित किया जा सकता है।

नीमास्त्र

प्राकृतिक खेती में रस चूसक कीटों और छोटी इल्लियों के प्रबंधन के लिए नीमास्त्र का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 5 कि.ग्रा. नीम की पत्तियां, 5 लीटर गौमूत्र, 1 कि.ग्रा. गोबर और 100 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। सभी सामग्रियों को अच्छी तरह मिलाकर मिश्रण को जालीदार कपड़े से ढककर 48 घंटे तक रखा जाता है। इस दौरान मिश्रण को दिन में चार बार अच्छी तरह चलाया

जाता है। इसके बाद तैयार नीमास्त्र को छान लिया जाता है। इसका प्रयोग बिना पानी मिलाए 100 लीटर प्रति एकड़ की दर से सीधे फसल पर छिड़काव के रूप में किया जा सकता है।

पंचगव्य

प्राकृतिक खेती में पौधों की वृद्धि एवं संरक्षण के लिए पंचगव्य का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 2 लीटर गाय का दूध, 2 लीटर दही, 3 लीटर गौमूत्र, 500 ग्राम घी, 5 कि.ग्रा. ताजा गोबर, 3 लीटर गन्ने का रस, 3 लीटर नारियल पानी और 12 पके केले

सारणी: दशपर्णी अर्क तैयार करने के लिए आवश्यक सामग्री एवं मात्रा

सामग्री	मात्रा
पानी	200 लीटर
गौमूत्र	20 लीटर
गोबर	2 कि.ग्रा.
हल्दी	500 ग्राम
हींग	10 ग्राम
तंबाकू की पत्तियां	1 कि.ग्रा.
लहसुन	500 ग्राम
मिर्च	1 कि.ग्रा.
लहसुन	500 ग्राम
अदरक	200 ग्राम
करेले की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
नीम की पत्तियां	3 कि.ग्रा.
धतूरे की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
करंज की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
सीताफल की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
आम की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
अरंडी की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
बबूल की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
अमरूद की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
महुआ की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
तुलसी की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
बेल की पत्तियां	2 कि.ग्रा.
पपीते की पत्तियां	2 कि.ग्रा.

दशपर्णी अर्क

प्राकृतिक खेती में विभिन्न प्रकार के कीटों एवं रोगों के प्रबंधन के लिए दशपर्णी अर्क का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए 200 लीटर पानी, 20 लीटर गौमूत्र, 2 कि.ग्रा. गोबर, 500 ग्राम हल्दी, 10 ग्राम हींग, 1 कि.ग्रा. तंबाकू, 1 कि.ग्रा. मिर्च, 500 ग्राम लहसुन, 400 ग्राम अदरक तथा 10 प्रकार की पत्तियों के पेस्ट की आवश्यकता होती है। इसे तैयार करने की प्रक्रिया लगभग 30-40 दिनों की होती है। इस दौरान विभिन्न सामग्रियों को निर्धारित क्रम में मिलाकर किण्वन के लिए रखा जाता है तथा मिश्रण को प्रतिदिन सुबह-शाम अच्छी तरह चलाया जाता है। तैयार दशपर्णी अर्क की 6-8 लीटर मात्रा को 200 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर छिड़काव किया जा सकता है। इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के कीटों एवं रोगों के प्रबंधन में सहायक होता है।



दशपर्णी अर्क बनाने की क्रिया



की आवश्यकता होती है। सबसे पहले गोबर, गौमूत्र और घी को मृदा के बर्तन में मिलाकर तीन दिनों तक नियमित रूप से चलाया जाता है। चौथे दिनों इसमें शेष सामग्री मिलाकर मिश्रण को 15 दिनों तक छाया में रखा जाता है और प्रतिदिन अच्छी तरह चलाया जाता है। मिश्रण में किण्वन होने और विशिष्ट गंध आने पर पंचगव्य तैयार माना जाता है। तैयार पंचगव्य की 250 ग्राम मात्रा को 10 लीटर पानी में मिलाकर फसल पर छिड़काव किया जा सकता है। इसका प्रयोग पौधों की वृद्धि तथा फसल की उपज और गुणवत्ता में सुधार के लिए किया जाता है।

खट्टी छाछ

प्राकृतिक खेती में फफूंदजनित रोगों के प्रबंधन के लिए खट्टी छाछ का उपयोग किया जाता है। इसे तैयार करने के लिए गाय के दूध को गर्म करने के बाद ठंडा करके दही

सफल कृषक

प्राकृतिक खेती और पशुपालन का समन्वय भी किसानों के लिए उपयोगी साबित हो रहा है। धमतरी जिले के किसान श्री रमन लाल साहू गोवंश से प्राप्त गोबर एवं गौमूत्र का उपयोग प्राकृतिक खेती में कर रहे हैं। इन्होंने गोवंश के लिए पानी की व्यवस्था हेतु खेत में छोटा तालाब बनाया है। पीएम-कुसुम योजना के तहत प्राप्त सौर पंप और गोबर गैस संयंत्र से वे कृषि एवं घरेलू जरूरतों को भी पूरा कर रहे हैं। साथ ही अन्य किसानों को प्राकृतिक खेती अपनाने के लिए प्रेरित कर रहे हैं।

जमाया जाता है। तैयार दही को 5-6 दिनों तक रखने के बाद अच्छी तरह मथकर मट्ठा अलग कर लिया जाता है। तैयार खट्टे-मट्ठे की 6 लीटर मात्रा को 100 लीटर पानी में मिलाकर फसल में फूल आने की अवस्था में छिड़काव किया जा सकता है। इसका प्रयोग फफूंदजनित रोगों के प्रबंधन में सहायक होता है और फसल की बेहतर वृद्धि एवं उपज में योगदान कर सकता है।

प्राकृतिक खेती की अपार संभावनाएं

छत्तीसगढ़ में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन प्राकृतिक खेती के विस्तार के लिए अनुकूल आधार प्रदान करते हैं। राज्य की समृद्ध जैव विविधता, वर्षा आधारित कृषि क्षेत्र और पर्याप्त



प्राकृतिक खेती के उपयोगी घटक

पशुधन संसाधन इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। गोबर एवं गौमूत्र जैसे स्थानीय संसाधनों का जैव-आदान तैयार करने में उपयोग कर बाहरी आदानों पर निर्भरता और खेती की लागत कम करने के साथ मृदा स्वास्थ्य में सुधार किया जा सकता है।

राष्ट्रीय प्राकृतिक खेती मिशन के तहत छत्तीसगढ़ में 307 जैव-आदान संसाधन केंद्र (बीआरसी) स्थापित करने का प्रस्ताव है। बस्तर, सरगुजा, मुंगेली और दंतेवाड़ा सहित विभिन्न जिलों में इनके लिए आवेदन आमंत्रित किए जा रहे हैं। वहीं गरियाबंद, बीजापुर, सुकमा, दंतेवाड़ा और नारायणपुर को पूर्ण जैविक जिला घोषित किया गया है तथा शेष जिलों में भी एक-एक विकास खंड को पूर्ण जैविक बनाने का कार्यक्रम चल रहा है।

छत्तीसगढ़ की सुगंधित धान किस्में 'जीराफुल' और 'नगरी दुबराज' भी प्राकृतिक खेती के लिए महत्वपूर्ण संभावनाएं प्रस्तुत करती हैं। जीरे जैसी सुगंध वाला 'जीराफुल' मुख्य रूप से सरगुजा संभाग और 'नगरी दुबराज' धमतरी क्षेत्र में उगाया जाता है। दोनों को भौगोलिक संकेतक (जीआई) टैग प्राप्त है। प्राकृतिक खेती की पद्धतियों से इन किस्मों की उत्पादन लागत कम करने तथा गुणवत्तापूर्ण उपज के माध्यम से किसानों की आय बढ़ाने की संभावनाएं हैं।

चुनौतियों का समाधान

प्राकृतिक खेती के विस्तार में कई व्यावहारिक चुनौतियां भी सामने आती हैं।



मृदा पोषण में लाभकारी जीवामृत

किसानों में इसकी तकनीकों से संबंधित व्यावहारिक जानकारी और प्रशिक्षण की कमी प्रमुख चुनौती है। शुरुआती वर्षों में उपज में कमी की आशंका के कारण भी कई किसान इसे अपनाने में संकोच करते हैं। इसके अलावा, गुणवत्तापूर्ण जैव-आदान और उपयुक्त बीजों की उपलब्धता, प्राकृतिक उत्पादों के लिए संगठित बाजार, उचित प्रमाणीकरण तथा मानकीकरण की कमी के कारण किसानों को उपज का अपेक्षित मूल्य प्राप्त करने में कठिनाई हो सकती है।

पशुओं के उपचार में प्रयुक्त कुछ औषधियों के अवशेष गोबर और गौमूत्र में पाए जाने की संभावना भी जैव-आदान की गुणवत्ता के संदर्भ में ध्यान देने योग्य विषय है। इसलिए जैव-आदान तैयार करते समय गुणवत्तापूर्ण एवं सुरक्षित सामग्री का उपयोग

आवश्यक है। प्राकृतिक विधियों से तैयार कीट एवं रोग प्रबंधन उत्पादों का प्रभाव कई परिस्थितियों में अपेक्षाकृत धीरे दिखाई दे सकता है, इसलिए फसल की नियमित निगरानी और समय पर निवारक उपाय महत्वपूर्ण होते हैं।

छत्तीसगढ़ में छोटे एवं सीमांत किसानों की अधिक संख्या को देखते हुए प्राकृतिक खेती को व्यापक स्तर पर अपनाने के लिए प्रशिक्षण, तकनीकी मार्गदर्शन, स्थानीय स्तर पर जैव-आदान की उपलब्धता और प्रभावी विपणन व्यवस्था को मजबूत करना आवश्यक है। इसके साथ ही उच्च मूल्य वाली उपयुक्त फसलों का चयन और स्थानीय मूल्य श्रृंखला का विकास प्राकृतिक खेती को किसानों के लिए अधिक लाभकारी एवं टिकाऊ बनाने में सहायक हो सकता है।

मिशन जीरो बर्निंग



फसल अवशेष जलाना उत्तर-पश्चिम भारत, विशेषकर पंजाब में, लंबे समय से गंभीर पर्यावरणीय और कृषि संबंधी चुनौती रहा है। इसके समाधान के लिए स्व-स्थाने फसल अवशेष प्रबंधन (सीआरएम) को बढ़ावा देते हुए प्रौद्योगिकी प्रदर्शन, प्रशिक्षण, जन-जागरूकता और सामुदायिक सहभागिता पर विशेष जोर दिया गया।

वर्ष 2024-25 के दौरान 3,244 हैक्टर क्षेत्र में सीआरएम प्रौद्योगिकियों का प्रदर्शन किया गया, जिसमें 3,200 से अधिक किसान प्रत्यक्ष रूप से शामिल हुए। इसके अतिरिक्त, अध्ययन दौरो और प्रक्षेत्र कार्यक्रमों के माध्यम से हजारों किसानों को जोड़ा गया। कुल 206 जागरूकता कार्यक्रमों से लगभग 17,000 किसान लाभान्वित हुए, जबकि किसानों और मशीन संचालकों के लिए 40 प्रशिक्षण

कार्यक्रम आयोजित किए गए। विद्यार्थियों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए 82 विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तर के कार्यक्रम आयोजित किए गए, जिनसे 13,000 से अधिक विद्यार्थियों को सतत फसल अवशेष प्रबंधन के प्रति जागरूक किया गया।

इस अभियान के प्रसार के लिए समाचार पत्र, वैज्ञानिक लेख, होर्डिंग्स, पोस्टर, दीवार लेखन, पम्फलेट, टीवी कार्यक्रम, व्हाट्सएप समूह, एम-किसान परामर्श और यूट्यूब जैसे

संचार माध्यमों का व्यापक उपयोग किया गया। इन समन्वित प्रयासों से पराली जलाने की घटनाओं में उल्लेखनीय कमी आई। पंजाब में वर्ष 2025 में 2023 की तुलना में लगभग 93 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई।

सीआरएम तकनीकों को अपनाने से आर्थिक और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में भी लाभ हुआ। वर्ष 2024-25 में खेती की लागत में लगभग 538 करोड़ रुपये की बचत हुई, मृदा में 495 करोड़ रुपये मूल्य के पोषक तत्व संरक्षित रहे तथा लगभग 571 मिलियन घन मीटर भूजल की बचत हुई। पंजाब का 'मिशन जीरो बर्निंग' अनुभव यह दर्शाता है कि तकनीक, प्रशिक्षण और जनभागीदारी के समन्वय से सतत एवं जलवायु-अनुकूल कृषि को प्रभावी रूप से बढ़ावा दिया जा सकता है।

(स्रोत: भाकृअनुप वार्षिक रिपोर्ट 2025-26)



लाख की वैज्ञानिक खेती से मिली समृद्धि

उदय कुमार एम.एस., राजवर्धन पाटील, परमानंद साहू,
संजय कुमार पाण्डेय और दिनेश कुमार

झारखण्ड के सिमडेगा जिले के सुमिगबेड़ा गांव के किसान सलेम गुरिया ने यह साबित किया है कि वैज्ञानिक तकनीक, सही मार्गदर्शन और मेहनत के बल पर सीमित संसाधनों में भी खेती को लाभकारी उद्यम में बदला जा सकता है। कभी धान-गेहूं की खेती और मजदूरी से परिवार का भरण-पोषण करने वाले सलेम के पास कुसुम के पेड़ तो थे, लेकिन लाख की वैज्ञानिक खेती की जानकारी न होने के कारण वे इनका पूरा लाभ नहीं उठा पा रहे थे। वैज्ञानिक प्रशिक्षण और तकनीकी मार्गदर्शन मिलने के बाद इन्होंने लाख उत्पादन की उन्नत विधियां अपनाईं और धीरे-धीरे अपनी खेती का विस्तार किया। इससे न केवल लाख का उत्पादन और इनकी आय कई गुना बढ़ी, बल्कि परिवार की आर्थिक स्थिति में भी उल्लेखनीय सुधार आया। आज लाख की खेती ने इनके जीवन को नई दिशा दी है और इनकी सफलता आसपास के किसानों को भी वैज्ञानिक पद्धति से लाख उत्पादन अपनाकर आय बढ़ाने के लिए प्रेरित कर रही है।

सलेम गुरिया की सफलता की यह यात्रा आर्थिक रूप से कमजोर किसान परिवार से आसान नहीं थी। वे एक साधारण एवं आते हैं। इनके पास लगभग 70 कुसुम के

भाकृअनुप-राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, नामकुम, रांची-834010 (झारखंड)

संदर्भ से अवसर की ओर

सलेम गुरिया की यात्रा दर्शाती है कि उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का वैज्ञानिक ढंग से उपयोग, उचित तकनीकी मार्गदर्शन और निरंतर परिश्रम किसान की आजीविका में बड़ा बदलाव ला सकते हैं। भाकृअनुप-राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, रांची से प्राप्त वैज्ञानिक प्रशिक्षण ने इनकी लाख उत्पादन पद्धति को नई दिशा दी। पारंपरिक विधि से सीमित उत्पादन प्राप्त करने वाले सलेम आज लाख की वैज्ञानिक खेती से बेहतर आय अर्जित करने के साथ स्थानीय लोगों को रोजगार भी उपलब्ध करवा रहे हैं। इनकी सफलता लाख उत्पादक किसानों के लिए एक उपयोगी उदाहरण है। यह अनुभव बताता है कि वैज्ञानिक लाख उत्पादन को बढ़ावा देकर किसानों की आय बढ़ाने, स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर सृजित करने और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने में योगदान दिया जा सकता है।

वृक्ष हैं, लेकिन लाख की वैज्ञानिक खेती की जानकारी के अभाव में इन वृक्षों का समुचित उपयोग नहीं हो पा रहा था। परिवार की आजीविका मुख्य रूप से धान एवं गेहूं की खेती पर निर्भर थी। खेती से होने वाली सीमित आय से परिवार का भरण-पोषण करना कठिन था। आर्थिक तंगी के कारण सलेम को खेती के साथ-साथ मजदूरी भी करनी पड़ती थी।

वर्ष 2010 में इन्होंने पहली बार चार कुसुम के वृक्षों पर पारंपरिक विधि से लाख की खेती शुरू की। इससे इन्हें लगभग 75 कि.ग्रा. लाख का उत्पादन प्राप्त हुआ और करीब 25,000 रुपये की आय हुई। यह आय परिवार की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त नहीं थी। इसलिए लाख की खेती के बावजूद उन्हें मजदूरी पर निर्भर रहना पड़ा और आर्थिक स्थिति में अपेक्षित सुधार नहीं हो सका।



लाख उत्पादन बना लाभकारी

वैज्ञानिक प्रशिक्षण से बदलाव

वर्ष 2018 सलेम गुरिया की लाख उत्पादन यात्रा में महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ। इनके बड़े भाई शोम गुरिया को भाकृअनुप-राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान, रांची में लाख की वैज्ञानिक खेती का प्रशिक्षण प्राप्त करने का अवसर मिला। प्रशिक्षण के दौरान लाख उत्पादन की उन्नत तकनीकों, खंड प्रणाली, पोषक वृक्षों की काट-छांट, बीज लाख संचारण, कीट एवं रोग प्रबंधन तथा फसल की देखभाल से संबंधित व्यावहारिक जानकारी दी गई।

प्रशिक्षण के बाद दोनों भाइयों ने वैज्ञानिक पद्धति अपनाते हुए 25 कुसुम के वृक्षों पर 100 कि.ग्रा. बीज लाख का संचार किया। वैज्ञानिक तकनीकों के उचित उपयोग, समय पर प्रबंधन और नियमित निगरानी के परिणामस्वरूप इन्हें लगभग 600 कि.ग्रा. लाख का उत्पादन प्राप्त हुआ। इससे परिवार की वार्षिक आय बढ़कर लगभग 3 लाख रुपये हो गई। वर्ष 2010 में लगभग 25,000 रुपये की आय की तुलना में यह उल्लेखनीय वृद्धि थी।

इस सफलता से उत्साहित होकर सलेम ने लाख उत्पादन का लगातार विस्तार किया। वे वैज्ञानिक सलाह के अनुसार लाख की खेती और फसल प्रबंधन करते रहे। वर्ष 2026 तक इन्होंने इस उद्यम को नई ऊंचाइयों तक पहुंचा दिया। इस वर्ष इन्होंने 200 कि.ग्रा. बीज लाख का संचार किया, जिससे लगभग 1,000 कि.ग्रा. लाख का उत्पादन प्राप्त हुआ। बेहतर गुणवत्ता के कारण उपज का बाजार में अच्छा मूल्य भी मिला और इनकी वार्षिक आय लगभग 9 लाख रुपये तक पहुंच गई।



अच्छी गुणवत्ता की लाख उपज

इस प्रकार, वर्ष 2010 में चार कुसुम के पेड़ों से 75 कि.ग्रा. लाख और लगभग 25,000 रुपये की आय से शुरू हुई इनकी यात्रा वर्ष 2026 में 200 कि.ग्रा. बीज लाख के संचार, लगभग 1,000 कि.ग्रा. उत्पादन और करीब 9 लाख रुपये की वार्षिक आय तक पहुंच गई। यह बदलाव वैज्ञानिक प्रशिक्षण, तकनीकी मार्गदर्शन, बेहतर फसल प्रबंधन और सलेम की निरंतर मेहनत का परिणाम है।

रोजगार सृजन

सलेम गुरिया की सफलता केवल इनकी व्यक्तिगत उपलब्धि तक सीमित नहीं रही। लाख उत्पादन के विस्तार के साथ इन्होंने गांव और आसपास के लोगों के लिए रोजगार के अवसर भी सृजित किए हैं। प्रत्येक उत्पादन चक्र में बीज लाख संचारण के लिए लगभग 5 श्रमिकों को 15 दिनों तक, कीटनाशक एवं फफूंदनाशक के छिड़काव के लिए 3 श्रमिकों को 10 दिनों तक तथा कटाई एवं

संग्रहण के लिए 15 श्रमिकों को 15 दिनों तक रोजगार मिलता है। इस प्रकार स्थानीय लोगों को गांव में ही काम मिलने लगा है और रोजगार के लिए बाहर जाने की उनकी निर्भरता कम हुई है।

लाख की वैज्ञानिक खेती से हुई आय ने सलेम के परिवार की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण बदलाव किया है। कभी सीमित आय और मजदूरी पर निर्भर इनका परिवार अब आर्थिक रूप से अधिक सशक्त हुआ है। बेहतर आय से परिवार के जीवन स्तर में सुधार आया है और बच्चों की शिक्षा पर अधिक ध्यान देना संभव हुआ है। इनकी सफलता से प्रेरित होकर गांव के अन्य किसान भी वैज्ञानिक पद्धति से लाख उत्पादन में रुचि दिखा रहे हैं, जिससे क्षेत्र में लाख की वैज्ञानिक खेती के विस्तार की संभावनाएं बढ़ी हैं।

दैनिक श्रमिक से सफल लाख किसान तक

झारखंड के जेरकी टोली निवासी श्री अमृत लाकड़ा ने मेहनत, वैज्ञानिक प्रशिक्षण और आधुनिक तकनीकों के माध्यम से दैनिक श्रमिक से सफल लाख किसान बनने तक का प्रेरक सफर तय किया। पहले वे दिहाड़ी मजदूरी करके लगभग 10,000 रुपये प्रतिमाह कमाते थे। वर्ष 2022 में इन्होंने कुछ कुसुम और बेर के वृक्षों तथा 15 कि.ग्रा. कुसुम लाख से लाख की खेती शुरू की। पहली ही फसल से उन्हें लगभग 15,000 रुपये की आय प्राप्त हुई।

वर्ष 2023 में उन्होंने अधिक पेड़ लीज पर लेकर और लगभग 6,000 फ्लेमिंगिया

पौधे लगाकर लाख उत्पादन का विस्तार किया। इस कार्य में उन्होंने लगभग 40,000 रुपये का निवेश किया। वन में आग जैसी चुनौतियों के बावजूद इन्होंने लाख की फसल से लगभग 75,000 रुपये की आय



फ्लेमिंगिया सेमियालाटा लाख मेजबान पौधे में कटाई के लिए तैयार लाख

अर्जित की। भाकृअनुप-राष्ट्रीय कृषि उच्चतर प्रसंस्करण संस्थान से मिले प्रशिक्षण और वैज्ञानिक मार्गदर्शन ने इनके उत्पादन कौशल को और बेहतर बनाया। उन्नत उत्पादन तकनीक, कीट प्रबंधन और विपणन संबंधी जानकारी से उनकी उत्पादकता और आय में काफी सुधार हुआ। वर्ष 2025 में इन्होंने लगभग 2.5 क्विंटल लाख का उत्पादन कर 2 रुपये लाख से अधिक की आय अर्जित की। आज श्री अमृत लाकड़ा ग्रामीण उद्यमिता और आत्मनिर्भरता का प्रेरक उदाहरण हैं।

(स्रोत: भाकृअनुप वार्षिक रिपोर्ट 2025-26)



जलवायु अनुकूल कृषि वानिकी

रामप्रकाश यादव, प्रभात तिवारी, राकेश कुमार और एम.जे. डोबरियाल

सामान्य बोलचाल की भाषा में कृषि वानिकी का अर्थ कृषि में वृक्षों का समावेश है। यह एक ऐसी भूमि उपयोग प्रणाली है, जिसमें वृक्षों, फसलों और पशुओं को एक ही भूखंड पर योजनाबद्ध ढंग से शामिल कर उत्पादन लिया जाता है। कृषि वानिकी में कृषि और वानिकी, दोनों प्रणालियों की उपयोगी विशेषताओं का समन्वय किया जाता है। यह कृषि को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अधिक लचीला बनाने में भी सहायक होती है। इसकी विशेषता यह है कि यह केवल जैव-भौतिकीय लाभों तक सीमित नहीं रहती, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, कल्याण, बाजार और पर्यावरणीय प्रबंधन से जुड़े उद्देश्यों को प्राप्त करने में भी मदद करती है। विभिन्न घटकों के समन्वित उपयोग से भूमि की उत्पादक क्षमता का बेहतर उपयोग संभव होता है। साथ ही, यह संसाधन संरक्षण, मृदा के कटाव पर नियंत्रण तथा पारिस्थितिक लचीलेपन को बढ़ाने में भी सहायक होती है।

वैज्ञानिक दृष्टि से कृषि वानिकी एक सघन भूमि प्रबंधन प्रणाली है, जिसमें वृक्षों और/या झाड़ियों को फसलों और/या रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी (उत्तर प्रदेश)

पशुओं के साथ योजनाबद्ध ढंग से इस प्रकार जोड़ा जाता है कि इनके बीच होने वाली पारस्परिक क्रियाओं से अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सके। कृषि वानिकी की स्थापना और सफल प्रबंधन के लिए

चार प्रमुख मानदंड महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

योजनाबद्ध संयोजन

इसमें वृक्षों, फसलों और/या पशुओं को योजनाबद्ध तरीके से एक साथ जोड़ा और

प्रबंधित किया जाता है, ताकि वे मिलकर अनेक प्रकार के उत्पाद और लाभ प्रदान कर सकें।

सघन प्रबंधन

कृषि वानिकी प्रणाली के उत्पादक एवं संरक्षणात्मक कार्यों को बनाए रखने के लिए इसका नियमित और सघन प्रबंधन किया जाता है। इसके अंतर्गत जुताई, उर्वरक देना, सिंचाई, छंटाई और विरलीकरण जैसे कार्य शामिल होते हैं।

एकीकृत प्रबंधन

इसमें वृक्ष, फसल और पशु जैसे विभिन्न घटकों को संरचनात्मक एवं कार्यात्मक रूप से एक एकीकृत प्रबंधन इकाई के रूप में जोड़ा जाता है। यह एकीकरण क्षैतिज या ऊर्ध्वाधर तथा एक साथ या क्रमिक रूप से किया जा सकता है। इससे भूमि की उत्पादक क्षमता का बेहतर उपयोग करते हुए संसाधन संरक्षण और आर्थिक उत्पादन में संतुलन बनाए रखने में सहायता मिलती है।

अंतःक्रिया

कृषि वानिकी में विभिन्न घटकों के बीच जैव-भौतिक एवं भौतिक अंतःक्रियाओं का उपयोग इस प्रकार किया जाता है कि उपयोगी उत्पाद प्राप्त हों और पारिस्थितिक लचीलापन बढ़े। इससे वन्यजीव आवास के संरक्षण तथा मृदा के कटाव पर नियंत्रण जैसे लाभ भी प्राप्त होते हैं।



नीम के साथ चना की अंतर-फसल

कृषि वानिकी प्रणाली में वृक्षों के समावेश के कारण यह आजीविका सुधार,

भूमि एवं वनों के सतत प्रबंधन तथा जलवायु परिवर्तन के शमन एवं अनुकूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह उत्पादक और पर्यावरणीय, दोनों प्रकार की सेवाएं प्रदान करती है। ये सेवाएं खेती से जुड़े विभिन्न हितधारकों को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अधिक लचीला बनने में सहायता करती हैं।

उत्पादक कार्य

कृषि वानिकी में विभिन्न प्रकार के वृक्षों और फसलों से अनेक उपयोगी उत्पाद प्राप्त होते हैं। इनमें ईंधन की लकड़ी, इमारती लकड़ी, चारा, फल, गोद, राल और छप्पर निर्माण की सामग्री प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त फल, मेवे, खाने योग्य पत्तियां और जड़ें तथा शहद जैसे खाद्य उत्पाद भी प्राप्त होते हैं। कृषि वानिकी से कन्फेक्शनरी, पेय पदार्थ, तेल और विभिन्न औद्योगिक उत्पादों के लिए कच्चा माल भी उपलब्ध होता है।

ऊर्जा के स्रोत के रूप में तरल जैव ईंधन, ईंधन की लकड़ी और लकड़ी का कोयला प्राप्त किया जा सकता है। इसी प्रकार लकड़ी, लिबास, प्लाईवुड और खंभों के रूप में निर्माण सामग्री उपलब्ध होती है। कई वृक्ष और झाड़ियां हर्बल एवं अन्य औषधीय उत्पादों का स्रोत भी होती



नीम के साथ सरसों की अंतर-फसल

हैं। इसके साथ ही पशुओं के लिए पोषक चारा और शुष्क मौसम में उपयोगी चारे की उपलब्धता सुनिश्चित करने में भी कृषि वानिकी उपयोगी है।

पर्यावरण अनुकूल

कृषि वानिकी खेत और उसके आसपास के क्षेत्र में अनेक पर्यावरणीय सेवाएं प्रदान करती है। वृक्षों और फसलों के समावेश से मृदा की उर्वरता में सुधार होता है। नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले वृक्ष मृदा में जैविक रूप से नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाने में सहायक होते हैं। वहीं गैर-नाइट्रोजन स्थिरीकरण वाले वृक्ष भी कार्बनिक पदार्थ जोड़कर तथा पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण के माध्यम से मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को बेहतर बनाते हैं।

कृषि वानिकी क्षरण और कटाव को कम करके क्षरित भूमि के पुनर्वास में भी सहायक है। वृक्ष सूर्य के सीधे प्रकाश को कम करते हैं, हवा की गति घटाते हैं और उससे होने वाले कटाव को नियंत्रित करते हैं। इससे तापमान में कमी तथा आर्द्रता में वृद्धि होती है और खेत की सूक्ष्म जलवायु में सुधार होता है।

वृक्ष किस्मों और रोपण स्थानों का उचित चयन जल की घुसपैठ तथा प्रवाह के विनियमन में सहायक होता है, जिससे जल प्रबंधन बेहतर बनता है। कृषि वानिकी स्तनधारियों, पक्षियों, कीटों और अन्य जीवों को छाया, आवास और प्रवास गलियारे उपलब्ध कराकर जैव विविधता संरक्षण में भी योगदान देती है।

कृषि वानिकी प्रणालियों में वृक्षों और झाड़ियों के समावेश के कारण काष्ठ और

बांस आधारित मॉडल

डेंड्रोकैलेमस स्ट्रिक्टस एवं बैम्बुसा वल्गेरिस बांस प्रजातियों को वर्ष 2019 में 3,000 वर्ग मीटर क्षेत्र में 8×6 मीटर की दूरी पर कुल 48 पौधों के साथ लगाया गया। इनके वृद्धि व्यवहार के आकलन के लिए पौधों की ऊंचाई, प्रति झुरमुट तनों की औसत संख्या, पांच कलम की औसत ऊंचाई तथा तीसरी इंटरनोड की लंबाई और व्यास को तिमाही अंतराल पर दर्ज किया गया। परिणामों में बांस की वृद्धि में बढ़ती प्रवृत्ति देखी गई। इसके साथ अंतर-फसल के रूप में उगाए गए चना और मसूर ने बेहतर प्रदर्शन किया तथा खुले खेत के लगभग बराबर अनाज उत्पादन दिया।



बांस-ल्यूसिना-ग्लिरिसिडिया आधारित मॉडल

मृदा सुधार के उद्देश्य से बांस-जैकबीन मॉडल में ल्यूसिना की हेज-रो क्रॉपिंग अपनाई गई। अगस्त और जनवरी में ल्यूसिना हेज की छंटाई से क्रमशः 1.65 और 1.70 टन/हैक्टर बायोमास खेत में जोड़ा गया। इसी अवधि में क्रमशः 1.30 और 0.70 टन/हैक्टर घास अवशेष भी भूमि में मिलाए गए। इस हस्तक्षेप के 3.5 वर्षों के दौरान मृदा प्रोफाइल में कार्बनिक कार्बन 0.15-0.35 प्रतिशत पाया गया तथा कार्बनिक पदार्थ में भी सुधार दर्ज किया गया।

भूमि, दोनों में अधिक कार्बन का संचयन होता है। इस प्रकार कृषि वानिकी उत्पादन, संसाधन संरक्षण और पर्यावरणीय संतुलन को एक साथ मजबूत करने वाली उपयोगी प्रणाली है।

जलवायु परिवर्तन शमन

कृषि वानिकी कार्बन पृथक्करण,

जलवायु अनुकूल

कृषि वानिकी जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने और उनके अनुरूप कृषि को ढालने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एकल फसल प्रणाली की तुलना में इसमें विभिन्न फसलों और वृक्षों का समावेश होने से जोखिम कम रहता है। उदाहरण के लिए, किसी एक प्रजाति पर कीट का प्रकोप होने पर अन्य प्रजातियों से उत्पादन मिलता रहता है, जिससे कुल नुकसान कम होता है। इस प्रकार कृषि वानिकी किसानों की अनुकूलन क्षमता बढ़ाकर उनकी भेद्यता कम करती है और जलवायु लचीलापन मजबूत करती है। कृषि वानिकी से प्राप्त विविध उत्पादन किसानों को सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा भी प्रदान करता है। किसी फसल के फेल होने पर वृक्षों से प्राप्त उत्पादों का उपयोग या विक्रय कर किसान पूर्ण नुकसान से बच सकते हैं। वृक्ष कार्बन अवशोषित कर भविष्य में ताप वृद्धि को कम करने में सहायक होते हैं तथा लंबे या बार-बार पड़ने वाले सूखे और भारी वर्षा जैसी चरम जलवायु घटनाओं से जुड़े जोखिमों को सीमित करते हैं। सीमित आय वाले किसानों के लिए विविध भोजन, आय के अतिरिक्त स्रोत, लकड़ी, छाया और औषधीय उत्पाद जीवनयापन को अधिक स्थिर बनाते हैं। जलवायु अनुकूल कृषि वानिकी प्रणाली अत्यधिक एकीकृत, अधिक घनत्व वाली, बहुमंजिला तथा बहुप्रजातीय होनी चाहिए।

बागवानी-वानिकी-चारागाह



यह प्रणाली 2,000 वर्ग मीटर क्षेत्र में 5×4 मीटर तथा 5×3 मीटर की दूरी पर कुल 72 पौधों के साथ स्थापित की गई। इसमें चिरौल को वानिकी घटक के रूप में, अनार एवं शरीफा को फल घटक के रूप में तथा बी.एन. हाइब्रिड को चारागाह घटक के रूप में शामिल किया गया। बी.एन. हाइब्रिड की सर्वाधिक उपज 5×4 मीटर की दूरी पर दर्ज की गई। अनार और शरीफा की तुलना में चिरौल में ऊंचाई तथा आधार व्यास की वृद्धि अधिक तेज पाई गई।

संरक्षण और प्रतिस्थापन के माध्यम से वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर को कम करने तथा जलवायु परिवर्तन शमन में योगदान देती है। कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र में विश्व के स्थलीय कार्बन का लगभग 12 प्रतिशत भाग पाया जाता है। विभिन्न भूमि उपयोग प्रणालियों में कृषि वानिकी की कार्बन पृथक्करण क्षमता सर्वाधिक मानी जाती है।

कृषि वानिकी प्रणालियों में भूमि के ऊपर 0.29 से 15.21 मेगाग्राम कार्बन/हैक्टर तथा मृदा में 1 मीटर की गहराई तक 30 से 300 मेगाग्राम कार्बन/हैक्टर संग्रहीत हो सकता है। एक अनुमान के अनुसार, वर्ष 2040 तक कृषि वानिकी में प्रति वर्ष 550 मीट्रिक टन कार्बन पृथक्करण की संभावित क्षमता है, जो भूमि उपयोग एवं प्रबंधन के विकल्पों में सर्वाधिक बताई गई है।

जलवायु अनुकूल कृषि वानिकी मॉडल

नीम-फलीदार फसल आधारित मॉडल

नीम रोपण के साथ लगातार दो वर्षों (2021-22 एवं 2022-23) तक रबी मौसम में फलीदार फसलों को अंतर-फसल के रूप में उगाया गया। परिणामों से पता चला कि चना और मसूर इस प्रणाली में अधिक आशाजनक रहे। चना की उपज 1,440-1,456 कि.ग्रा./हैक्टर तथा मसूर की उपज 1,362-1,381 कि.ग्रा./हैक्टर दर्ज की गई। इन फसलों को नीम के साथ अंतर-फसल के रूप में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है और इनकी उपज एकल फसल के लगभग बराबर प्राप्त हुई।

नीम आधारित कृषि वानिकी के लिए उपयुक्त सरसों की किस्में

नीम के साथ अंतर-फसल के रूप में सरसों की विभिन्न किस्मों का दो वर्षों (2022-23 एवं 2023-24) तक मूल्यांकन किया गया। परिणामों के अनुसार आरवीएम 2, पी बोल्ड, आरजीएन 298, पीएम 31, आरजीएन 236 तथा आरएच 406 किस्में नीम आधारित कृषि वानिकी में अंतर-फसल के लिए उपयुक्त पाई गईं। इनसे 1,110-1,258 कि.ग्रा./हैक्टर उपज प्राप्त हुई।

सरसों की अंतर-फसल के लिए नीम की छंटाई

सरसों की गिरिराज किस्म को दो वर्षों (2022-23 एवं 2023-24) तक नीम की अलग-अलग छंटाई व्यवस्थाओं के अंतर्गत अंतर-फसल के रूप में उगाया गया। अध्ययन



व्यावसायिक कृषि वानिकी की भरपूर संभावनाएं

में पाया गया कि सरसों की एकल फसल से प्राप्त 1,311 कि.ग्रा./हैक्टर उपज के लगभग बराबर 1,262-1,279 कि.ग्रा./हैक्टर उपज प्राप्त करने के लिए 4-5 वर्ष आयु के नीम वृक्षों में 20 प्रतिशत से अधिक छंटाई आवश्यक है।

चना, मसूर और सरसों के अतिरिक्त नीम आधारित कृषि वानिकी में अरबी एवं हल्दी जैसी छायाप्रिय फसलों को भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

औद्योगिक कृषि वानिकी

मिलिया (मेलिया डुबिया), खमेर (मेलिना आर्बोरिया), कदम्ब (नियोलामार्किया कदम्बा) तथा अर्दु (एलेन्थस एक्सेलसा) को विभिन्न रोपण अंतरालों पर लगाया गया। मिलिया, खमेर एवं कदम्ब को 5×3 मीटर, 5×4 मीटर और 5×3 मीटर के अंतराल पर, जबकि अर्दु को 5×4 मीटर तथा 5×3 मीटर के अंतराल पर लगाया गया। इसके अंतर्गत 2,500 वर्ग मीटर क्षेत्र में मिलिया के 144 पौधे, 3,000 वर्ग मीटर में खमेर के 168 पौधे, 3,000 वर्ग मीटर में कदम्ब के 148 पौधे तथा 2,000 वर्ग मीटर में अर्दु के 44 पौधे लगाए गए। इन औद्योगिक वृक्षों के साथ चना, मसूर, अदरक, अरबी और हल्दी जैसी फसलों को अंतर-फसल के रूप में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

त्रिफला आधारित कृषिवानिकी

जी-4 क्विनोआ जर्मप्लाज्म से औसतन 3.56 टन/हैक्टर अनाज उपज प्राप्त हुई। इसके

साथ आंवला, हरड़ और बहेड़ा वृक्षों के प्रदर्शन का लगातार चार वर्षों (2021-2024) तक आकलन किया गया। परिणामों से पता चला कि ऊंचाई और तने के व्यास की वृद्धि के मामले में आंवला ने बेहतर प्रदर्शन किया, जबकि हरड़ और बहेड़ा की वृद्धि अपेक्षाकृत धीमी रही।

कृषिवानिकी जलवायु परिवर्तन से जुड़ी भेद्यता, जोखिम एवं संवेदनशीलता को कम करने के साथ कृषि प्रणालियों की अनुकूलन क्षमता बढ़ाती है। यह जलवायु संबंधी प्रतिकूल घटनाओं के प्रभावों को सहने, उनसे उबरने तथा उत्पादन प्रणाली की कार्यक्षमता बनाए रखने में सहायक होती है। वृक्षों एवं मृदा में वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड का संचयन कर यह जलवायु परिवर्तन के शमन में भी योगदान देती है।

कृषि वानिकी मृदा को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान कर उसकी उर्वरता और जैव विविधता बढ़ाने में सहायक है। इससे उत्पादन में वृद्धि, खाद्य विविधता और किसानों की आजीविका में सुधार संभव होता है। इस प्रकार यह किसानों तथा कृषि प्रणालियों को जलवायु जोखिमों के प्रति अधिक लचीला बनाने का प्रभावी माध्यम है। बुंदेलखंड क्षेत्र में चना, मसूर और सरसों के साथ अदरक, अरबी तथा हल्दी जैसी छायाप्रिय फसलों को भी कृषि वानिकी प्रणालियों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।



अक्टूबर के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह¹, अंजली पटेल², अवनीश प्रकाश सिंह³,
कपिला शेखावत¹, विनय उपाध्याय⁴ और प्रवीण कुमार उपाध्याय¹

॥ अक्टूबर माह, जिसे आश्विन-कार्तिक कहा जाता है, सर्दियों के आगमन का समय है और कृषि की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। इस माह किसानों को मौसम और तापमान में होने वाले बदलावों का ध्यान रखना चाहिए। इसी समय धान, मक्का, ज्वार व बाजरा जैसी धान्य फसलों; मूंग, उड़द, अरहर, लोबिया एवं ग्वार जैसी दलहनी फसलों तथा सोयाबीन, मूंगफली, तिल और अरंडी जैसी तिलहनी फसलों की अगेती किस्मों की कटाई व मड़ाई शुरू हो जाती है। साथ ही तोरिया, सरसों, चना, मटर, मसूर, गेहूं, जौ, शीतकालीन मक्का, शरदकालीन गन्ना, बरसीम, जई, सब्जी, बागवानी, पुष्प व सुगंधित पौधों की बुआई भी प्रारंभ होती है। किसान खेतों की सफाई, जुताई, मृदा की तैयारी तथा आवश्यक कृषि सामग्री की व्यवस्था में जुट जाते हैं। भारतीय कृषि में रबी फसलों का महत्वपूर्ण योगदान है। रबी फसलों की अधिक उत्पादकता का श्रेय उन्नत किस्मों, बेहतर सस्य क्रियाओं तथा रोग व कीटों के अपेक्षाकृत कम प्रकोप को जाता है। कृषि उत्पादन में वृद्धि किसानों की मेहनत, कृषि वैज्ञानिकों द्वारा विकसित तकनीकों तथा उपलब्ध संसाधनों के उचित प्रबंधन का परिणाम है। वैज्ञानिक तकनीकों और विशेषज्ञों की सलाह अपनाकर किसान लागत घटाने के साथ उत्पादन और आय बढ़ा सकते हैं। इस माह के प्रमुख कृषि कार्यों का विवरण इस लेख में प्रस्तुत है। ॥

अक्टूबर माह कृषि की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस समय खरीफ फसलों की कटाई एवं मड़ाई के साथ-साथ रबी फसलों की बुआई की तैयारियां भी शुरू हो जाती हैं। धान, मक्का, ज्वार, बाजरा, मूंग, उड़द, अरहर, सोयाबीन, मूंगफली और तिल जैसी फसलों

पकने लगती हैं, वहीं सरसों, चना, मटर, मसूर, गेहूं, जौ, बरसीम और जई की बुआई के लिए खेत तैयार किए जाते हैं। इस अवधि में तापमान में धीरे-धीरे गिरावट आती है, इसलिए किसानों को मौसम के अनुसार कृषि कार्यों की योजना बनानी चाहिए। खेत की

¹सस्य विज्ञान संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012; ²सस्य विज्ञान विभाग, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर-492012 (छत्तीसगढ़); ³कृषि विभाग, साउथ बिहार केंद्रीय विश्वविद्यालय, गया; ⁴सस्य विज्ञान विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सफाई, समय पर जुताई, गुणवत्तापूर्ण बीज, संतुलित उर्वरक उपयोग तथा रोग-कीट प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। वैज्ञानिक तकनीकों और कृषि विशेषज्ञों की सलाह के अनुसार कार्य करके उत्पादन लागत कम करने के साथ-साथ बेहतर उपज और आय प्राप्त की जा सकती है। इसी प्रकार इस माह में किए जाने वाले महत्वपूर्ण कृषि कार्य इस प्रकार हैं:

धान

जल प्रबंधन

फसल की उत्पादकता बढ़ाने के लिए उचित समय पर पर्याप्त जल उपलब्धता अत्यंत महत्वपूर्ण है। धान में फूल आने तथा दानों की दुग्धावस्था के समय खेत में पर्याप्त नमी बनाए रखें। इसके लिए आवश्यकतानुसार लगभग एक सप्ताह के अंतराल पर सिंचाई करें। कटाई से लगभग 15 दिनों पूर्व सिंचाई बंद कर दें।

कीट एवं रोग नियंत्रण

धान में दाना भरने की अवस्था में गंधी बग का प्रकोप हो सकता है। इस कीट के वयस्क एवं शिशु दोनों दानों से रस चूसते हैं, जिससे दाने खोखले रह जाते हैं। प्रभावित दानों पर काली फफूंद के साथ काले अथवा भूरे धब्बे दिखाई देते हैं। देर से पकने वाली किस्मों में इसका प्रकोप अपेक्षाकृत अधिक होता है। इसके नियंत्रण के लिए मैलाथियॉन

ज्वार

इस फसल की किस्में लगभग 100-130 दिनों में पककर तैयार हो जाती हैं। जब बालियों के हरे दाने सफेद या पीले रंग में बदल जाएं तथा दानों में नमी घटकर लगभग 20 प्रतिशत रह जाए, तब फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। कटाई के बाद फसल को खलिहान में कम से कम एक सप्ताह तक अच्छी तरह सुखाएं। इसके बाद मड़ाई डंडों से पीटकर, बैलों से दांय चलाकर अथवा थ्रेसर की सहायता से की जा सकती है। मड़ाई के तुरंत बाद ओसाई करके दानों को भूसे से अलग कर लें। आधुनिक सस्य विधियां अपनाने पर संकर ज्वार से सिंचित दशा में लगभग 35-40 क्विंटल दाना तथा 100-120 क्विंटल कड़बी प्रति हैक्टर प्राप्त की जा सकती है। वहीं बारानी क्षेत्रों में लगभग 20-25 क्विंटल दाना तथा 70-80 क्विंटल कड़बी प्रति हैक्टर प्राप्त होती है।

तिलहनी फसलें

सूरजमुखी

सूरजमुखी के पुष्पमुण्ड की पिछली सतह पीली-भूरी होने तथा बीजों में लगभग 14-15 प्रतिशत नमी रहने पर फसल की कटाई करनी चाहिए। कटाई के बाद बीजों को अच्छी तरह सुखाकर साफ करें। सुरक्षित भंडारण के लिए बीजों की नमी 8-9 प्रतिशत तक कम कर लें तथा उन्हें वायुरुद्ध पात्रों में रखें।

मूंगफली

इस फसल में फलियां बनते समय खेत में पर्याप्त नमी बनाए रखना आवश्यक है। अधिक उपज और बेहतर तेल मात्रा के लिए फसल की खुदाई उचित समय पर करें। गुच्छेदार किस्मों में लगभग दो माह तथा फैलने वाली किस्मों में लगभग तीन माह तक फूल आते रहते हैं। फलियों के विकास के लिए लगभग दो माह का समय आवश्यक होता है। अधिकतर फलियां पक जाने पर फसल की खुदाई करें। देर से खुदाई करने पर बिना सुषुप्तावस्था वाली किस्मों के बीज खेत में नमी मिलने पर पुनः अंकुरित हो सकते हैं। पत्तियां गिरने, पौधों के सूखने अथवा पीले पड़ने पर फसल पकने का संकेत मिलता है। सामान्य परिस्थितियों में अगेती और पछेती किस्में क्रमशः लगभग 105 और 135 दिनों में पक जाती हैं। फलियों को 9-10 प्रतिशत नमी रहने तक अच्छी तरह सुखाएं।

तिल

जब तिल की पत्तियां पीली होकर गिरने लगें, तब फसल पककर तैयार मानी जाती है। इस अवस्था में पौधों की नीचे से कटाई कर लें। कटाई में देरी करने पर फलियां चटकने से बीजों की अधिक हानि हो सकती है। कटाई के बाद पौधों के बंडल बनाकर खेत में छोटे-छोटे ढेरों में खड़ा कर दें। पौधे अच्छी तरह सूखने पर डंडे से पीटकर बीज निकालें। इसके बाद बीजों को साफ करके धूप में सुखाएं और भंडारण के लिए उनमें नमी लगभग 8-10 प्रतिशत रखें।

50 ई.सी. 2 मि.ली. या एसीफेट 75 एस.पी. 2 ग्राम या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 2 मि.ली. अथवा डी.डी.वी.पी. 76 ई.सी. 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर मैलाथियॉन पाउडर 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

भूरा माहू के प्रकोप वाले क्षेत्रों में खेत में गोलाकार भूरे धब्बे दिखाई देते हैं और पौधे सूखने लगते हैं। इस अवस्था को 'हॉपर बर्न' कहा जाता है। अधिक प्रकोप की स्थिति में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने पर खेत से कुछ दिनों के लिए पानी निकाल दें, जिससे कीट की संख्या कम की जा सकती है। अधिक प्रकोप पर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 125 मि.ली. प्रति हैक्टर की दर से अथवा कार्बोरिल 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण का छिड़काव करें। छिड़काव विशेष रूप से पौधों के निचले भाग पर करें।

धान की फसल में गर्दन झुलसा रोग की आशंका होने पर टेबुकोनाजोल 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से दोपहर 3 बजे के बाद छिड़काव करें। पर्णच्छद विगलन (शीथ रॉट) की स्थिति में प्रोपिकोनाजोल 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

कटाई, मड़ाई एवं भंडारण

अधिक उपज और बेहतर गुणवत्ता के लिए फसल की कटाई उचित समय पर करना आवश्यक है। कटाई का समय मौसम, किस्म तथा अपनाई गई सस्य क्रियाओं पर निर्भर करता है। धान में बालियां निकलने के लगभग एक माह बाद फसल पक जाती है। लगभग 80

बाजरा

बाजरे की फसल पकने पर पौधों की पत्तियां पीली पड़कर सूखने लगती हैं तथा दाने गहरे रंग के हो जाते हैं। सामान्यतः बाजरे की फसल 75-85 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। सबसे पहले बालियों की कटाई करें और इसके बाद शेष पौध भाग को काटकर सुखा लें। मड़ाई से पहले बालियों को अच्छी तरह सुखाना आवश्यक है। बालियों से दाने अलग करने के लिए थ्रेसर का उपयोग किया जा सकता है अथवा उन्हें डंडों से पीटकर भी दाने निकाले जा सकते हैं। इसके बाद दानों को अच्छी तरह साफ एवं सुखाकर ही भंडारित करें।

प्रतिशत बालियों के दाने पक जाने अथवा दानों में करीब 20 प्रतिशत नमी रहने पर कटाई करना उपयुक्त होता है।

कटाई हंसिया, दरांती अथवा शक्तिचालित यंत्रों से भूमि की सतह से लगभग 15-20 सें.मी. ऊपर से करें। मड़ाई हाथ से पीटकर, बैलों की सहायता से अथवा शक्तिचालित थ्रेसर से की जा सकती है। कंबाइन हार्वेस्टर से कटाई और मड़ाई दोनों कार्य एक साथ किए जा सकते हैं। मड़ाई के बाद दानों की अच्छी तरह सफाई करें और उन्हें लगभग 12 प्रतिशत नमी तक सुखाने के बाद ही भंडारित करें।

मक्का

कटाई

मक्का की फसल किस्म के अनुसार लगभग 75-100 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। फसल पकने पर भुट्टों के दानों और उन्हें ढकने वाली पत्तियों का रंग पीला होने लगता है। दाने में नाखून गड़ाने पर यदि दूधिया रस न निकले और दाना सख्त हो चुका हो, तो फसल कटाई के लिए तैयार मानी जाती है। कटाई सामान्यतः दो चरणों में की जाती है। पहले पौधों को काटा जाता है और इसके बाद भुट्टों को पौधों से अलग किया जाता है। भुट्टे निकालने के बाद बचे पौधे भाग को सुखाकर पशु चारे के रूप में उपयोग किया जा सकता है। इस अवस्था में दानों में लगभग 25-30 प्रतिशत नमी रहती है। भुट्टों से दाने अलग करने के लिए कॉर्न शेलर का उपयोग करें।

बेबीकॉर्न तथा स्वीटकॉर्न की कटाई

गुणवत्तापूर्ण बेबीकॉर्न के लिए रेशा (सिल्क) निकलने के 2-3 दिनों के भीतर तुड़ाई करें। जब सिल्क भुट्टे से लगभग 2-3 सें.मी. बाहर निकल आए, तब 1-2 दिनों के भीतर भुट्टों को तुड़ाई कर लेनी चाहिए। इस अवस्था में दाने बने नहीं होने चाहिए अथवा बहुत प्रारंभिक एवं मुलायम अवस्था में होने चाहिए। भुट्टे की लंबाई लगभग 7-10 सें.मी. और मोटाई 1-1.5 सें.मी. उपयुक्त मानी जाती है। स्वीटकॉर्न में रेशा निकलने के लगभग 20-22 दिनों बाद तुड़ाई करना उपयुक्त रहता है, क्योंकि इस समय दानों में शर्करा की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक होती है।

दलहनी फसलें

मूंग

जब पौधों की अधिकांश फलियां पककर काली हो जाएं, तब फसल की कटाई की जा सकती है। फलियों को खेत में अधिक

गेहूं

बुआई

असिंचित/बारानी तथा सीमित सिंचाई की दशा में गेहूं की समय पर बुआई अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से प्रारंभ कर दें। बुआई के समय दिन का औसत तापमान 21-25 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त रहता है। अनुकूल तापमान से दानों की चमक, आकार और गुणवत्ता बेहतर होती है। प्रति हैक्टर बुआई के लिए 100-125 कि.ग्रा. बीज का प्रयोग करें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22.5 सें.मी. तथा बीज की गहराई 5-7 सें.मी. रखें।



किस्मों का चयन

हमेशा उन्नत, नवीन तथा क्षेत्र विशेष के लिए संस्तुत किस्मों का चयन करें। असिंचित/बारानी तथा सीमित सिंचाई की दशा में समय पर बुआई के लिए एच.आई. 1531, एच.आई. 8627, एच.आई. 1500, एच.डी. 4672, एच.डी. 2967, एच.डी. 2987, एच.डी. 2888, एच.डी. 3386, एच.डी. 3338, एच.डब्ल्यू. 2004, पी.बी.डब्ल्यू. 644, डब्ल्यू.एच. 1080, एम.ए.सी.एस. 6145, एम.पी. 3288, एच.एस. 507, एच.पी.डब्ल्यू. 349, वी.एल. 907, टी.एल. 2942 (ट्रिटिकेल), टी.एल. 2969 (ट्रिटिकेल), एस.के.डब्ल्यू. 196, एच.पी.डब्ल्यू. 251, वी.एल. 829, एन.आई.ए.डब्ल्यू. 1415, ए.के.डी.डब्ल्यू. 2997-16, एच.डी. 2781, सी-306, के-8962, के-9465, मालवीय-533 एवं अमर उपयुक्त हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना उचित रहता है। असिंचित/बारानी तथा सीमित सिंचाई की दशा में समय पर बुआई के लिए 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर का प्रयोग किया जा सकता है।

खरपतवार नियंत्रण

गेहूं की बुआई के तीन दिनों के भीतर पेण्डीमेथीलिन 1000 मि.ली. प्रति हैक्टर को 500 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से चौड़ी पत्ती एवं घास वर्गीय खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है। मेट्रिब्यूजिन 175 ग्राम प्रति हैक्टर को 500 लीटर पानी में घोलकर बुआई के 25-30 दिनों बाद प्रयोग करें। इसके विकल्प के रूप में सल्फोसल्फ्यूरॉन 25 ग्राम को 250-300 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर छिड़काव करें अथवा 25 ग्राम सल्फोसल्फ्यूरॉन+4 ग्राम मेटसल्फ्यूरॉन मिथाइल को 250-300 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर प्रयोग करें। खरपतवारनाशियों का छिड़काव साफ मौसम में, जब हवा की गति बहुत कम हो, तभी करें।

समय तक सूखी अवस्था में छोड़ने पर वे चटक जाती हैं और दाने बिखरने से उपज की हानि होती है। जैसे-जैसे फलियां पकती जाएं, उनकी तुड़ाई करते रहें। एक साथ पकने वाली

किस्मों में हंसिया से सीधे कटाई करें। फसल सूखने के बाद थ्रेसर से गहाई करें। भंडारण के समय दानों में नमी 10-12 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए।

उड़द

फसल की कटाई का समय बुआई तथा किस्म पर निर्भर करता है। जैसे-जैसे फलियां पकती जाएं, उनकी तुड़ाई करते रहें। यदि फलियां एक साथ पकने वाली किस्म हो, तो हंसिया से कटाई करें। फसल पूरी तरह सूख जाने के बाद थ्रेसर से गहाई की जा सकती है। भंडारण के समय दानों में नमी 10-12 प्रतिशत होनी चाहिए। उचित प्रबंधन से 10-15 क्विंटल प्रति हैक्टर तक दाना उपज प्राप्त की जा सकती है।

अरहर

इस फसल में फलीछेदक (हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा) प्रमुख हानिकारक कीट है। इसके प्रकोप को कम करने के लिए गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें। अरहर की अगेती बुआई 15-20 जून तथा पछेती बुआई 15-20 जुलाई तक कर लें। अरहर के साथ ज्वार की अंतःफसल लेने से भी फलीछेदक का प्रकोप कम किया जा सकता है। नियंत्रण के लिए स्पाइनोसैड 45 एस.जी. 0.2 ग्राम प्रति लीटर, इंडोक्साकार्ब 15.8 ई.सी. 0.5 मि.ली. प्रति लीटर अथवा इमामेक्टिन बेंजोएट 5 एस.जी. 0.3 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। नीम तेल 5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

अगेती अरहर में चित्तीदार फलीछेदक (मारुका विटराटा) का प्रकोप विशेष रूप से पुष्पावस्था में अधिक आर्द्रता वाले क्षेत्रों में देखा जाता है। इसके प्रबंधन के लिए अरहर की बुआई 15 मई से 15 जून के बीच करें। कीट नियंत्रण के लिए मीथोमाइल 40 एस.पी. 0.6 ग्राम प्रति लीटर, प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. 2 मि.ली. प्रति लीटर अथवा डी.डी.वी.पी. 76 ई.सी. 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव किया जा सकता है। कली बनने की अवस्था में क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 18.5 एस.सी. 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव भी प्रभावी रहता है।

लोबिया

हरी फलियों के उपयोग के लिए फलियों की तुड़ाई लगभग 45-90 दिनों तक की जा सकती है। इसके बाद फलियां रेशायुक्त हो जाती हैं और दाने पकने लगते हैं, जिससे वे सब्जी के लिए उपयुक्त नहीं रहतीं। दाने के लिए फसल की कटाई तब करें, जब लगभग 90 प्रतिशत फलियां पक जाएं। कटाई में देरी से उपज की हानि हो सकती है। वर्षा की संभावना होने पर फलियों की तुड़ाई पहले कर लें। गहाई ट्रैक्टर, बैलों अथवा हाथ से

शीतकालीन मक्का

बुआई

जहां सिंचाई की पर्याप्त सुविधा उपलब्ध हो, वहां मक्का की खेती रबी की अगेती फसल के रूप में की जा सकती है। इसके लिए उचित जल निकास वाली बलुई मटियार से दोमट मृदा उपयुक्त रहती है, जिसमें वायु संचार अच्छा हो तथा पी.एच. मान 6.5-7.5 के बीच हो। खारे पानी की समस्या वाले क्षेत्रों में मक्का की बुआई मेड़ के ऊपर करने के बजाय मेड़ के किनारे करें, ताकि जड़ें लवणता से कम प्रभावित हों। संकर किस्मों के लिए 18-20 कि.ग्रा. तथा संकुल किस्मों के लिए 20-25 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 18-20 सें.मी. रखें।



किस्मों का चयन

समय पर बुआई के लिए संकर एवं संकुल मक्का की अनुशंसित किस्मों में शक्तिमान-1, गंगा-11, डक्कन-103, डक्कन-104, त्रिशूल, एक्स-1382, के.एच. 5081, के.एच. 5991, सीडटेक 2324, धवल, शरदमणि एवं शक्ति-1 प्रमुख हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

बुआई से 10-15 दिनों पूर्व खेत में 10-12 टन अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हैक्टर मिला दें। संकर मक्का के लिए 150-180 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60-70 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 60-70 कि.ग्रा. पोटाश तथा 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर प्रयोग करें। संकुल मक्का के लिए 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश तथा 30 कि.ग्रा. गंधक प्रति हैक्टर दें। फॉस्फोरस, पोटाश और जिंक की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की 50 प्रतिशत मात्रा बुआई के समय आधार खाद के रूप में दें।

की जा सकती है। गहाई से पहले फसल को अच्छी तरह धूप में सुखाएं, ताकि दानों के टूटने की आशंका कम रहे।

जौ

बुआई

असिंचित क्षेत्रों में जौ की बुआई 20 अक्टूबर से 10 नवंबर तक करनी चाहिए, जबकि सिंचित क्षेत्रों में 25 नवंबर तक बुआई की जा सकती है। पछेती बुआई 15 दिसंबर तक कर लें। जौ की बुआई के लिए 80-100 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है।

बुआई हल के पीछे कूड़ों में अथवा सीडड्रिल से 20-25 सें.मी. पंक्ति से पंक्ति की दूरी तथा 5-6 सें.मी. गहराई पर करें। असिंचित दशा में बीज 6-8 सें.मी. गहराई पर बोएं। बीजजनित रोगों के नियंत्रण के लिए बुआई से पूर्व बीजोपचार अवश्य करें।

किस्मों का चयन

असिंचित एवं सिंचित क्षेत्रों के लिए छिलके वाली उन्नत किस्मों में अंबर, ज्योति, आजाद, के.-141, आर.डी.-2035, आर.डी.-2052, आर.डी.-2503, आर.डी.-2508,

आर.डी.-2552, आर.डी.-2559, आर.डी.-2624, आर.डी.-2660, आर.डी.-2668, हरितमा, प्रीति, जागृति, लखन, मंजुला, आर. एस.-6, नरेंद्र जौ-1, नरेंद्र जौ-2, नरेंद्र जौ-3, के.-603, एन.डी.बी.-1173 तथा एस.ओ.-12 प्रमुख हैं। बिना छिलके वाली किस्मों में गीतांजलि (के-1149), डीलमा तथा नरेंद्र जौ-4 (एन.डी.बी.-943) उपयुक्त हैं।

ऊसर मृदा

इसके लिए आजाद, के 141, जे.बी. 58, आर.डी. 2715, आर.डी. 2786, पी.एल. 751, एच.बी.एल. 316, एच.बी.एल. 276, बी.एल.बी. 85 तथा बी.एल.बी. 56; लवण एवं क्षारीय मृदा के लिए एन.डी.बी. 1173, आर.डी. 2552, आर.डी. 2794, नरेंद्र जौ 1 तथा नरेंद्र जौ 3 उपयुक्त हैं। माल्ट एवं बीयर के लिए प्रगति, ऋतंभरा, डी.एल. 88 (6 धारीय), आर.डी. 2715, डी.डब्ल्यू.आर. 28 तथा रेखा (2 धारीय) प्रमुख किस्में हैं। अन्य किस्मों में डी.डब्ल्यू.आर.बी. 91, डी.डब्ल्यू.आर.यू.बी. 52, बी.एच. 393, पी.एल. 419, पी.एल. 426, के 560, के 409 तथा एन.डी.आर. जौ 5 आदि शामिल हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना उचित रहता है। असिंचित दशा में प्रति हैक्टर 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रयोग करें। सिंचित एवं समय पर बुआई के लिए 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर दें। माल्ट किस्मों के लिए 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करें। ऊसर भूमि एवं विलंब से बुआई की दशा में 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20-25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर प्रयोग करें।

चना

भूमि का चयन व तैयारी

उचित जल निकास वाली बलुई दोमट से चिकनी दोमट मृदा, जिसका पी.एच. मान 6.5-7.5 के बीच हो, चने की खेती के लिए उपयुक्त रहती है। एक गहरी जुताई के बाद हेरो चलाकर तथा पाटा लगाकर खेत को बुआई के लिए तैयार करें।

बुआई

उत्तर-पश्चिमी तथा उत्तर-पूर्वी भारत के मैदानी क्षेत्रों में बारानी दशा में चने की बुआई अक्टूबर के दूसरे पखवाड़े तथा सिंचित दशा में नवंबर के प्रथम पखवाड़े में करना उपयुक्त



जौ की उन्नत प्रजाति

रहता है। छोटे दाने वाली किस्मों के लिए 50-60 कि.ग्रा. तथा मध्यम एवं बड़े दाने वाली किस्मों के लिए 80-85 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है। बुआई पंक्तियों में करें तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30-45 सें.मी. रखें। बीज को लगभग 10 सें.मी. गहराई पर बोएं। कम गहराई पर बुआई करने से उकठा रोग का प्रकोप बढ़ सकता है। पछेती बुआई में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22.5 सें.मी. रखें। बुआई से पूर्व बीज को उपयुक्त राइजोबियम मिश्रण से उपचारित करने पर उपज में लगभग 10-15 प्रतिशत वृद्धि हो सकती है।

किस्मों का चयन

भारत के विभिन्न क्षेत्रों एवं परिस्थितियों के लिए अनुमोदित उन्नत किस्मों में अद्विका

(एन.सी. 7), एल 558 (जी.एल.के. 17301), पूसा जे.जी. 16 (बी.जी.एम. 10221 डी.टी.आई.एल.), कंचन (आई.पी.सी.के. 2009-145), कुबेर (आई.पी.सी. 2010-142), पूसा चना विजय (बी.जी.एम. 10217), शालीमार चना-2, पूसा 10216, पूसा चना 20211, पूसा 3043, सुपर एनिगेरी-1, आई.पी.सी. एल 4-14, बी.जी.एम. 4005, आई.पी.सी.एम.बी. 19-3, आर.वी.जी. 204, फुले विश्वराज, पूसा 256, पूसा 391, पूसा 362, पूसा 372, पूसा 329, पूसा धारवाड़, प्रगति, पूसा 1103, पूसा 5028, पूसा हरा चना 112, पंत चना-3 तथा पंत चना-4 प्रमुख हैं। ऊसर क्षेत्रों के लिए करनाल चना-1 उपयुक्त है।

काबुली चने की प्रमुख उन्नत किस्मों में जे.जी.के. 6, आर.एल.बी.जी.के. 963,



चने की स्वस्थ फसल

पूसा 2085, पूसा 5023, पूसा चमत्कार, पूसा 2024, पूसा 1108, पूसा 1105, पूसा 1088, पूसा 3022, बी.जी.डी. 128, पूसा काबुली 1003, आर.वी.जी. 203, जे.जी.के. 1, आई.सी.सी.वी. 32, जवाहर चना-1, शुभ्रा, उज्ज्वल, सदाबहार, के-4, के-5, एल-550, काक-2, पंत काबुली चना-2, जी.एन.जी. 1969 तथा काबुली-1292 शामिल हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें। चने की अच्छी फसल के लिए बुआई के समय प्रति हैक्टर 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस का प्रयोग करें। गंधक की कमी वाली मृदा में 20 कि.ग्रा. गंधक तथा जिंक की कमी वाली मृदा में 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर देना लाभकारी रहता है।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवारों के रासायनिक नियंत्रण के लिए पेण्डीमेथीलीन 2.5-3.0 लीटर प्रति हैक्टर को लगभग 650 लीटर पानी में घोलकर बुआई के 2-3 दिनों के भीतर, खरपतवारों के अंकुरण से पूर्व छिड़काव करें। इससे लगभग 4-6 सप्ताह तक खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है। चौड़ी पत्ती तथा घासवर्गीय खरपतवारों के नियंत्रण के लिए एलाक्लोर 4 लीटर अथवा फ्लुक्लोरालिन 45 ई.सी. 2.22 लीटर प्रति हैक्टर को लगभग 700 लीटर पानी में मिलाकर बुआई के तुरंत बाद या अंकुरण से पूर्व छिड़काव करें।

मटर

बुआई

मटर की बुआई का उपयुक्त समय अक्टूबर के अंत से 15 नवंबर तक है। छोटे दाने वाली किस्मों के लिए 50-60 कि.ग्रा. तथा बड़े दाने वाली किस्मों के लिए 80-90 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। मृदा एवं बीजजनित रोगों से बचाव, अच्छे अंकुरण तथा स्वस्थ पौध संख्या सुनिश्चित करने के लिए बीजों को थीरम 75 प्रतिशत+कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत (2:1) की 3 ग्राम मात्रा अथवा ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बुआई करें।

मृदा एवं बीजजनित रोगों के नियंत्रण के लिए ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्ल्यू. पी. अथवा ट्राइकोडर्मा हार्जिनियम 2 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. की 2.5 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर को 60-75 कि.ग्रा. अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाएं। इसमें हल्का पानी छिड़ककर 8-10 दिनों तक छाया में रखने

मसूर

बुआई

उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों में मसूर की बुआई अक्टूबर के अंत में तथा उत्तर-पूर्वी मैदानी और मध्य क्षेत्रों में नवंबर के दूसरे पखवाड़े में करना उपयुक्त रहता है। बड़े दाने वाली किस्मों के लिए 55-60 कि.ग्रा. तथा छोटे दाने वाली किस्मों के लिए 40-45 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। बीजजनित रोगों से बचाव के लिए थीरम 2.5 ग्राम अथवा जिंक मैंगनीज कार्बोनेट 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करें। इसके बाद 10 कि.ग्रा. बीज को राइजोबियम लेग्यूमिनोसेरम मिश्रण के एक पैकेट (200 ग्राम) से उपचारित कर बुआई करें, विशेषकर उन खेतों में जहां पहले मसूर की खेती न की गई हो। फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु मिश्रण के प्रयोग से पौधों को फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है।



किस्मों का चयन

मसूर की प्रमुख उन्नत किस्मों में एल.एल. 1613, आई.पी.एल. 230, पंत मसूर 12 (पी.एल. 245), वी.एल. मसूर 150, पूसा अगेती, पूसा वैभव, पूसा मसूर 5, पूसा शिवालिक, एल 4727, गरिमा, कोटा मसूर-1, कोटा मसूर-2, कोटा मसूर-3, कोटा मसूर-4, आर. वी.एल. 11-6, आई.पी.एल. 220, आर.वी.एल. 13-5, आर.वी.एल. 13-7, एल 4729, पी.एस.एल. 9, वी.एल. मसूर 148, वी.एल. मसूर 507, वी.एल. मसूर 1, वी.एल. मसूर 4, वी.एल. मसूर 103, वी.एल. मसूर 125, वी.एल. मसूर 126, वी.एल. मसूर 129, पंत मसूर 5, पंत मसूर 6, पंत मसूर 7, एच.यू.एल. 57, शालीमार मसूर 1, अरुण, मलिका, नरेंद्र मसूर 1, के.एल. 218, डब्ल्यू.बी.एल. 77, आई.पी.एल. 406, आई.पी.एल. 81, एल.एच. 89-48, डी.पी.एल. 62, डी.पी.एल. 15, जवाहर मसूर 3, जे.एल. 1, सपना, प्रिया तथा शोरी प्रमुख हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण की संस्तुति के आधार पर करें। मसूर की बुआई से पूर्व 15-20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20 कि.ग्रा. पोटाश तथा 20 कि.ग्रा. गंधक प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें। गंधक की पूर्ति के लिए 200 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति हैक्टर भी दिया जा सकता है। मृदा में नमी कम होने पर उर्वरकों की मात्रा स्थानीय संस्तुति एवं मृदा परीक्षण के अनुसार समायोजित करें।

के बाद बुआई से पूर्व अंतिम जुताई के समय खेत में मिला दें।

किस्मों का चयन

भारत के विभिन्न क्षेत्रों एवं परिस्थितियों के लिए अनुमोदित उन्नत किस्मों में एच.एफ.

पी. 715, पंजाब-89, कोटा मटर-1, आई. पी.एफ.डी. 12-8, आई.पी.एफ.डी. 13-2, पंत मटर 250, एच.एफ.पी. 1428, पूसा प्रभात, पूसा पन्ना, एच.यू.डी.पी. 15, सपना तथा जे.पी. 885 प्रमुख हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें। सामान्य दशाओं में प्रति हैक्टर 15-20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 20 कि.ग्रा. पोटाश तथा 20 कि.ग्रा. गंधक पर्याप्त रहता है। ज़िंक एवं मॉलिब्डेनम की कमी होने पर क्रमशः 15-20 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति हैक्टर तथा 1.0-1.5 कि.ग्रा. अमोनियम मॉलिब्डेट के प्रयोग की संस्तुति की जाती है।

खरपतवार नियंत्रण

बुआई के 25-30 दिनों बाद एक निराई-गुड़ाई अवश्य करें। रासायनिक नियंत्रण के लिए फ्लूक्लोरालिन 45 प्रतिशत ई.सी. की 2.2 लीटर मात्रा प्रति हैक्टर को 800-1000 लीटर पानी में घोलकर बुआई से ठीक पहले मृदा में मिलाएं। इसके विकल्प के रूप में पेण्डिमेथीलीन 30 प्रतिशत ई.सी. 3.30 लीटर, एलाक्लोर 50 प्रतिशत ई.सी. 4.0 लीटर अथवा बासालिन 0.75-1.0 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर को उपयुक्त मात्रा में पानी में घोलकर बुआई के 2-3 दिनों के भीतर फ्लैट फैन नोजल से समान रूप से छिड़काव करें।

तोरिया और सरसों

इन फसलों की बुआई का उपयुक्त समय बारानी क्षेत्रों में अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा तथा सिंचित क्षेत्रों में नवंबर का प्रथम पखवाड़ा है। बीज दर 3-4 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर रखें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30-45 सें.मी., पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सें.मी. तथा बीज की गहराई 2.5-3.0 सें.मी. रखें। बीजजनित रोगों से बचाव के लिए प्रति कि.ग्रा. बीज को बाविस्टीन 2 ग्राम, एप्रोन 6 ग्राम, कैप्टॉन



मटर

2 ग्राम अथवा थीरम 2.5 ग्राम में से किसी एक फफूंदनाशी से उपचारित करें।

पोषक तत्व प्रबंधन

खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें। बुआई से पूर्व 15-20 टन अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हैक्टर तथा 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश और 30 कि.ग्रा. गंधक प्रति हैक्टर प्रयोग करें। फॉस्फोरस, पोटाश और गंधक की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुआई के समय दें। शेष 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन बुआई के 30-35 दिनों बाद प्रथम सिंचाई के समय दें। 25 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति हैक्टर का प्रयोग भी लाभकारी रहता है। खड़ी फसल में ज़िंक की कमी दिखाई देने पर 0.5

प्रतिशत ज़िंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करें। फूल आने की अवस्था में मल्टीप्लेक्स अथवा एग्रेमिन 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करने से परागण में सुधार हो सकता है।

विरलीकरण एवं खरपतवार नियंत्रण

बुआई के 20-22 दिनों के भीतर निराई-गुड़ाई के साथ अतिरिक्त पौधों को निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सें.मी. रखें। रासायनिक नियंत्रण के लिए बासालिन (फ्लूक्लोरालिन 45 ई.सी.) 2.2



सरसों की स्वस्थ उपज

लीटर प्रति हैक्टर को 800 लीटर पानी में मिलाकर अंतिम जुताई से पहले छिड़काव करें और तुरंत जुताई करके पाटा लगा दें। इसके विकल्प के रूप में पेण्डिमेथीलीन 30 ई.सी. 3.30 लीटर प्रति हैक्टर को 800 लीटर पानी में मिलाकर बुआई के 1-2 दिनों के भीतर, अंकुरण से पूर्व छिड़काव करें।

जल प्रबंधन एवं अंतःफसल

अगती सरसों में सामान्यतः दो सिंचाइयां पर्याप्त रहती हैं। पहली सिंचाई बुआई के 30-35 दिनों बाद तथा दूसरी सिंचाई फलियों में बीज बनने की अवस्था में आवश्यकता होने पर करें। आलू के साथ अंतःफसल के

सारणी: सरसों एवं तोरिया की उन्नत किस्में

स्थिति/फसल	अनुशंसित किस्में
सिंचित क्षेत्र में समय पर (अक्टूबर) बुआई	पूसा सरसों 21, पूसा सरसों 22, पूसा सरसों 24, पूसा सरसों 25, पूसा सरसों 26, पूसा सरसों 27, पूसा सरसों 29, पूसा सरसों 30, पूसा डबल जीरो सरसों 31, पूसा डबल जीरो सरसों 35, पूसा डबल जीरो सरसों 36, बी.पी.एम. 11 (भरतपुर सरसों 11), गुजरात सरसों 7, आजाद महक, पूसा विजय, पूसा करिश्मा, पूसा जगन्नाथ, पूसा बोल्ड, पूसा अग्रणी, गिरिराज, एन.डी.आर.ई. 4, माया, वसुंधरा, आर.जी.एन. 73, एन.आर.सी.एच.बी.
सिंचित क्षेत्र में पछेती बुआई	पूसा सरसों 28, आर.जी.एन. 145, नव गोल्ड
क्षारीय एवं लवणीय भूमि	सी.एस. 56, सी.एस. 54, सी.एस. 52, सी.एस. 58, सी.एस. 60
पीली सरसों	पंत श्वेता, पंत गिरिजा
तोरिया	पीतांबरी, उत्तरा, सुश्री, पंत हिल तोरिया-1, पंत तोरिया-508, राज विजय तोरिया-1, तपेश्वरी, त्रिपुरा तोरिया-1, आर.एस.पी.टी. 6
भूरी सरसों	एच.पी.बी.एस. 1, शालीमार सरसों-2, शालीमार सरसों-3
तारामीरा	वल्लभ तारामीरा-1 (पी.यू.टी. 93-11), जोबनेर तारा (आर.टी.एम. 1351), ज्वाला तारा (आर.टी.एम. 1355)
गोभी सरसों	आर.एस.पी.एन. 25, जी.एस.सी. 7, ओ.एन.के. 1

लिए आलू की तीन पंक्तियों के बीच सरसों की एक पंक्ति बोई जा सकती है।

शरदकालीन गन्ना

बीज/सेट का चयन

बीज के लिए 9-10 माह आयु का स्वस्थ गन्ना चुनें। गन्ना उन्नत किस्म का, मोटा, ठोस, शुद्ध एवं रोगमुक्त होना चाहिए तथा उसकी आंखें पूर्ण विकसित एवं फूली हुई हों। शरदकालीन गन्ने की बुआई के लिए अक्टूबर का पहला पखवाड़ा उपयुक्त रहता है। बुआई के लिए पिछले वर्ष शरद ऋतु में बोई गई फसल से प्राप्त स्वस्थ गन्ने का बीज के रूप में उपयोग करना बेहतर रहता है।

किस्मों का चयन

शीघ्र पकने वाली उन्नत किस्मों में को.एल.के. 14201, सी.ओ. 16034, सी.ओ. 17018, सी.ओ. 15023, सी.ओ. 11015, सी.ओ.एस. 16231, सी.ओ.एल.के. 15201, सी.ओ.एल.के. 15204, सी.ओ.एल.के. 15466, सी.ओ.पी.बी. 93, सी.ओ.पी.बी. 95, सी.ओ.पी.बी. 96, सी.ओ.पी.बी. 98, को.शा. 8436, को.शा. 88230, को.शा. 95255 तथा को. 0239 प्रमुख हैं। मध्यम एवं देर से पकने वाली किस्मों में को.शा. 767, को.शा. 8432, को.शा. 88216, को.शा. 97264, को.शा. 96275, को.शा. 95427, को.शा. 96436, को.शा. 92263, को.शा. 96269, यू.पी. 0097, यू.पी. 22, यू.पी. 39 तथा पंत 84212 प्रमुख हैं।

बुआई

शुद्ध फसल में गन्ने की बुआई 75 सें.मी. तथा आलू, राई, चना या सरसों के साथ अंतःफसल प्रणाली में 90 सें.मी. की दूरी पर करें। एक आंख वाले टुकड़ों से बुआई करने पर लगभग 10 क्विंटल तथा दो आंख वाले टुकड़ों से बुआई करने पर लगभग 20 क्विंटल बीज प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है। बीज उपचार के लिए 205 ग्राम एरीटान अथवा 500 ग्राम एगलॉल को 100 लीटर पानी में घोलकर लगभग 25 क्विंटल गन्ने के टुकड़ों का उपचार किया जा सकता है। जैविक उपचार के लिए प्रति एकड़ 1 लीटर एजोटोबैक्टर+1 लीटर पी.एस.बी. को 100 लीटर पानी में मिलाएं। रासायनिक उपचार के बाद बीज के टुकड़ों को सुखाकर इस घोल में 30 मिनट तक डुबाने के बाद बुआई करें।

पोषक तत्व प्रबंधन

बुआई से पहले खेत की तैयारी के समय ट्राइकोडर्मा मिश्रित प्रेसमड अथवा गोबर की खाद 10 टन प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें। मृदा



गन्ना

परीक्षण उपलब्ध न होने की स्थिति में बुआई के समय 60-75 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60-80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 20-40 कि.ग्रा. पोटाश तथा 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर प्रयोग करें।

पौध संरक्षण

दीमक, पेड़ी अंकुर भेदक तथा जड़ भेदक कीटों के नियंत्रण के लिए क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 6.25 लीटर प्रति हैक्टर अथवा क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 18.5 एस.सी. 500-600 मि.ली. प्रति हैक्टर को 1500-1600 लीटर पानी में घोलकर प्रयोग करें। इसके विकल्प के रूप में फोरेट 10 जी की 20 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर गन्ने के बीज के ऊपर डालकर कूड़ों को मृदा से अच्छी तरह ढक दें। मृदा का पी.एच. 7.5 से अधिक होने पर इमिडाक्लोप्रिड 1.8 एस.एल. 500 मि.ली. प्रति हैक्टर को 1500-1600 लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग करें।

बरसीम

बुआई

बरसीम की अच्छी उपज के लिए



बरसीम

इसकी बुआई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में करना उपयुक्त रहता है। समय से पहले बुआई करने पर अधिक तापमान के कारण अंकुरण और जमाव प्रभावित हो सकता है तथा खरपतवारों का प्रकोप बढ़ सकता है। जबकि देर से बुआई करने पर कम तापमान के कारण पौधों की वृद्धि धीमी हो जाती है। बुआई से पूर्व राइजोबियम मिश्रण को 250 ग्राम गुड़ के घोल में मिलाकर 10 कि.ग्रा. बीज पर लेपित करें और छाया में सुखाकर बुआई करें। अधिक हरा चारा उत्पादन के लिए 25-30 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। देर से बुआई की स्थिति में बीज दर लगभग 5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर बढ़ा दें।

किस्मों का चयन

बरसीम की प्रमुख उन्नत किस्मों में वी.एल. 44, आई.जी.एफ.आर. एस. 99-1, हिसार बरसीम-1, जवाहर बरसीम-5, बरसीम लुधियाना, मिस्कावी, पूसा जायंट, बी.एल. 180, टाइप-526, टाइप-678, टाइप-780, जे.बी. 1, जे.बी. 2, बुंदेल-2, वरदान, टी-5, टी-26, जे.एच.पी. 146, वी.एल. 10, वी.एल. 2, वी.एल. 1, वी.एल. 22, यू.पी.बी. 110 तथा यू.पी.बी. 103 शामिल हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

बुआई से लगभग एक माह पूर्व 10-15 टन अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हैक्टर मृदा में मिला दें। बुआई के समय 20-30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 50-60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर अंतिम जुताई के समय खेत में मिलाएं।



जई

मिश्रित फसल

प्रथम कटाई में अधिक चारा उत्पादन के लिए बरसीम के साथ जौ, जई अथवा सरसों की मिश्रित बुआई की जा सकती है। इसके लिए 30-40 कि.ग्रा. जौ या जई अथवा 2 कि.ग्रा. सरसों का बीज प्रति हैक्टर बरसीम की बुआई से पहले खेत में छिड़कें और हल या ट्रैक्टर से मृदा में मिला दें। इसके बाद बरसीम की बुआई करें।

जई

बुआई

जई की बुआई अक्टूबर से दिसंबर तक की जा सकती है। अक्टूबर में बुआई करने पर फसल को अधिक समय मिलता है, जिससे कटाइयों की संख्या बढ़ सकती है। हालांकि, अखिल भारतीय समन्वित चारा अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत किए गए परीक्षणों में अधिकतम उपज के लिए लगभग 15 नवंबर का समय उपयुक्त पाया गया है। देर से बुआई करने पर उपज में कमी आ सकती है। बीज दर बुआई की विधि, मृदा की उर्वरता तथा बुआई के समय पर निर्भर करती है। सामान्यतः 80-100 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। बुआई से पूर्व 1 कि.ग्रा. बीज को 1 ग्राम वीटावैक्स से उपचारित करें तथा लगभग 20 सें.मी. पंक्ति की दूरी पर बुआई करें।

किस्मों का चयन

जई की पुरानी किस्मों में ओ.एल. 15, एन.पी. 1, एन.पी. 2, एन.पी. 1 हाइब्रिड, एन.पी. 3 हाइब्रिड, एन.पी. 27 हाइब्रिड, बी. एस. 1, बी. 2 एस, अल्जीरियन, बिस्टान-2, बिस्टान-11, ब्रेकल-11 तथा ब्रेकल-10 शामिल हैं। वर्तमान में कैट, एफ.ओ.एस. 1,

यू.पी.ओ. 13, के. 10, चौड़ी पत्ती पालमपुर-1, हरियाणा जई-114 तथा एच.एफ.ओ. 114 प्रमुख किस्में हैं।

सब्जी फसलें

पत्ता गोभी

पत्ता गोभी को फूलगोभी की अपेक्षा कम तापमान की आवश्यकता होती है। इसकी अच्छी वृद्धि और उपज के लिए लगभग 15-20 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। शीघ्र तैयार होने वाली किस्मों के लिए बलुई दोमट तथा देर से तैयार होने वाली किस्मों के लिए कछारी दोमट मृदा उपयुक्त होती है। मृदा का पी.एच. मान 5.8-6.8 होना चाहिए। मध्यावधि एवं पछेती किस्मों जैसे लाल पत्ता गोभी, पूसा मुक्ता,

फूलगोभी



पछेती फूलगोभी की किस्मों जैसे के.टी.एच. 301, पूसा स्नोबॉल-1, पूसा स्नोबॉल-2, पूसा स्नोबॉल के-1, पूसा स्नोबॉल के-2, पूसा स्नोबॉल के.टी. 25, स्नोबॉल-16, पूसा हाइब्रिड-2, पूसा मेघना, पूसा सिंथेटिक, पूसा दीपाली, पूसा शुभ्रा, उन्नत जापानी, पंत शुभ्रा तथा काशी गोभी-25 के बीज पौधशाला में बोएं। ब्रोकली की किस्मों में पूसा के.टी.एस. 1, पालम समृद्धि, बेलस्टार, केलाब्रेसी, डेस्टनी, ईस्टर्न मैजिक, ग्रीन मैजिक, परपल स्प्राउटिंग, रोमनेस्को, सन किंग तथा वाल्थम-29 प्रमुख हैं। पूसा स्नोबॉल-2 की रोपाई 15 अक्टूबर के बाद की जा सकती है। पछेती फूलगोभी में अग्रेती फसल की अपेक्षा खाद एवं उर्वरकों की आवश्यकता अधिक होती है। अच्छी फसल के लिए प्रति हैक्टर 300 क्वंटल गोबर की खाद, 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 60 कि.ग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है। गोबर की खाद रोपाई से पूर्व खेत में अच्छी तरह मिला दें। खरपतवार नियंत्रण के लिए उथली गुड़ाई करते रहें, ताकि पौधों की जड़ों को नुकसान न पहुंचे। पहली गुड़ाई पौधों के जमने के बाद करें तथा रोपाई के लगभग 6 सप्ताह बाद पौधों पर मृदा चढ़ाएं। मध्यम अवधि की फूलगोभी में रोपाई के 25-30 दिनों बाद 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की पहली टॉप ड्रेसिंग करें। कीट प्रकोप की स्थिति में 0.2 प्रतिशत मैलाथियॉन का छिड़काव किया जा सकता है।



लाल बन्दगोभी

गोल्डन एकड़, पूसा ड्रम हेड, पूसा बंद गोभी संकर-1, कोपेनहेगन मार्केट, प्राइड ऑफ इंडिया, क्विसोर, समर क्वीन तथा पूसा अगेती की पौधशाला में बुआई पूरे अक्टूबर माह की जा सकती है। इनकी रोपाई मध्य अक्टूबर से प्रारंभ करें। रोपाई के 25-30 दिनों बाद 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर की पहली टॉप ड्रेसिंग करें।

गांठगोभी

गांठगोभी की पूसा विराट तथा व्हाइट वियना जैसी किस्मों की रोपाई पूरे अक्टूबर माह में 30×20 सें.मी. की दूरी पर की जा सकती है।

आलू

आलू के अच्छे अंकुरण के लिए 24-25 डिग्री सेल्सियस, वानस्पतिक वृद्धि के लिए 18-20 डिग्री सेल्सियस तथा कंद निर्माण के लिए 17-20 डिग्री सेल्सियस तापमान अनुकूल रहता है। बुआई से पूर्व बीज कंदों को शीतगृह से निकालकर 10-15 दिनों तक छायादार स्थान पर रखें तथा सड़े या अंकुरण न करने वाले कंदों को अलग कर दें।



आलू की उन्नत प्रजाति-कुफरी जामुनिया

अल्प अवधि की किस्मों में कुफरी नीलकंठ, कुफरी सह्याद्रि, कुफरी करन, कुफरी ख्याति, कुफरी लवकर, कुफरी चंद्रमुखी, कुफरी सूर्या, कुफरी पुखराज, कुफरी अशोका, कुफरी जवाहर तथा कुफरी नवताल प्रमुख हैं। इनकी बुआई 10 अक्टूबर तक की जा सकती है। मध्यम अवधि की किस्मों में कुफरी ज्योति, कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी चिप्सोना-3, कुफरी चिप्सोना-4, कुफरी फ्राइसोना, कुफरी बहार, कुफरी बादशाह, कुफरी जवाहर, कुफरी सतलुज, कुफरी आनंद, कुफरी पुष्कर, कुफरी गरिमा, कुफरी लालिमा और कुफरी सिंदूरी तथा मध्यम से दीर्घ अवधि वाली किस्मों में कुफरी हिमसोना, कुफरी सिंदूरी, कुफरी शीतमान, कुफरी स्वर्ण और कुफरी गिरिराज प्रमुख हैं। इनकी बुआई 15-25 अक्टूबर तक कर लें।

बायोफोर्टिफाइड आलू

कुफरी जामुनिया मध्यम अवधि की अधिक उपज देने वाली उन्नत किस्म है, जो बुआई से कटाई तक लगभग 90 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज लगभग 320-350 क्विंटल प्रति हैक्टर बताई गई है। यह बायोफोर्टिफाइड किस्म है तथा इसके बैंगनी गूदे में एंथोसायनिन की मात्रा अधिक होती है, जो शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करता है।

सब्जी मटर

सब्जी मटर की बुआई के लिए अक्टूबर का प्रथम पखवाड़ा उपयुक्त रहता है। इसकी

टमाटर



रबी मौसम में टमाटर की बुआई के लिए अक्टूबर उपयुक्त रहता है। प्रमुख किस्मों में पूसा रोहिणी, पूसा सदाबहार, पूसा हाइब्रिड-1, पूसा-120, पूसा संकर-2, पूसा संकर-4, पूसा संकर-8, काशी अभियान, पूसा दिव्या, काशी विशेष, काशी अमृत, काशी अनुपम, काशी हेमंत, काशी शरद, हिमसोना, ताई-01458, पंत टमाटर-10, बी.सी.टी.एच.-4, पी.ए.यू.-2372, आनंद टमाटर-4, भाग्य, इम्प्रूव्ड भाग्य, काशी अमन, डी.ए.आर.एल.-68, पंजाब रट्टा, ए.टी.एल. 08-21, काशी अमूल, काशी आदर्श, कावेरी-304, काशी चयन तथा सी.टी.एच.-1 शामिल हैं।

प्रमुख उन्नत किस्मों में पूसा प्रबल, पूसा श्री, पूसा प्रगति, अर्केल, पंजाब अगेती-6, पंत मटर-3, पंत मटर-5, आजाद पी-3, आजाद पी-5, काशी नंदिनी, काशी उदय, काशी

शिमला मिर्च



शिमला मिर्च की प्रमुख किस्मों में पूसा दीप्ति, पूसा मेघदूत, अर्का मोहिनी, अर्का अतुल्या, अर्का बसंत, अर्का गौरव, इंद्र, कैलिफोर्निया वंडर, येलो वंडर, भारत तथा सोलन हाइब्रिड-2 शामिल हैं। इनकी रोपाई 15 अक्टूबर के बाद की जा सकती है। रोपाई के 20 दिनों बाद पहली तथा 40 दिनों बाद दूसरी टॉप ड्रेसिंग के रूप में 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (लगभग 54 कि.ग्रा. यूरिया) प्रति हैक्टर दें।

शक्ति, वी.एल.-7, काशी मुक्ति, काशी समृद्धि, काशी अगेती, विवेक मटर-11, मटर अगेती-7 तथा वी.पी. 434 शामिल हैं। अगेती किस्मों के लिए 120-150 कि.ग्रा. तथा मध्यम एवं पछेती किस्मों के लिए 80-100 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। बुआई से पूर्व बीज शोधन एवं बीजोपचार अवश्य करें।

खेत की तैयारी के समय 20-25 टन गोबर की खाद, 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर प्रयोग करें। तनाछेदक के नियंत्रण के लिए बुआई के समय फोरेट 10 जी की 10 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टर मृदा में मिलाएं। खरपतवार नियंत्रण के लिए स्टॉम्प 600 ग्राम को 370 लीटर पानी में घोलकर बुआई के 1-2 दिनों के भीतर छिड़काव करें। पहली सिंचाई बुआई के 25-30 दिनों बाद करें। कीट नियंत्रण के लिए आवश्यकता अनुसार 0.1 प्रतिशत मैलाथियॉन का छिड़काव किया जा सकता है।

उन्नत किस्मों के लिए 400-500 ग्राम तथा संकर किस्मों के लिए 150-200 ग्राम बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। सीमित बढवार वाली किस्मों की रोपाई 60×60 सें.मी. तथा असीमित बढवार वाली किस्मों की रोपाई 75-90×60 सें.मी. दूरी पर करें। रोपाई के समय उन्नत किस्मों के लिए 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फेट तथा 60-80 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर दें। जिंक एवं बोरॉन की कमी होने पर क्रमशः 20-25 कि.ग्रा.



प्याज के स्वस्थ कंद

जिंक सल्फेट तथा 8-12 कि.ग्रा. बोरेक्स प्रति हैक्टर प्रयोग करें। संकर अथवा असीमित बढवार वाली किस्मों में 50-55 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर प्रयोग किया जा सकता है।

लहसुन

लहसुन की प्रमुख किस्मों में भीमा ओंकार, भीमा पर्पल, वी.एल. लहसुन-1, वी.एल. लहसुन-2, एग्रीफाउंड व्हाइट, जी-1, यमुना सफेद, यमुना सफेद-2, यमुना सफेद-3, यमुना सफेद-4, यमुना सफेद-5, एग्रीफाउंड पार्वती, जी-50 (बैंगनी धब्बा एवं झुलसा रोग सहनशील), जी-282, जी-262, सेलेक्शन-1, सेलेक्शन-2, नासिक लहसुन, एच.जी.-1, एच.जी.-6,



लहसुन की उपज

गाजर



गाजर की प्रमुख किस्मों में पूसा वृष्टि, पूसा रुधिरा, पूसा आसिता, पूसा मेघाली, पूसा यमदग्नि तथा संकर किस्मों में पूसा वसुधा और पूसा नयनज्योति शामिल हैं। इनकी बुआई करें तथा प्रति हैक्टर 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फेट और 40 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग करें। मूली की प्रमुख किस्मों में पूसा मृदुला, पूसा देसी और जापानी व्हाइट शामिल हैं।

एल.सी.जी.-1, गोदावरी, श्वेता तथा पूना लहसुन शामिल हैं।

अच्छी उपज के लिए रोपाई से लगभग एक सप्ताह पूर्व 300 क्विंटल अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हैक्टर मृदा में मिला दें। बुआई के समय अंतिम जुताई के दौरान 100 कि.ग्रा. यूरिया, 300 कि.ग्रा. सुपर फॉस्फेट तथा 100 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर खेत में अच्छी तरह मिला दें। एक हैक्टर क्षेत्र के लिए 5-6 क्विंटल बीज कलियां पर्याप्त रहती हैं। बुआई 15×10 सें.मी. की दूरी पर करें तथा कलियों को लगभग 2 सें.मी.



पालक

मोटी मृदा की परत से ढक दें। खरपतवार नियंत्रण के लिए पेण्डीमेथालीन 1.25 लीटर अथवा फ्लूक्लोरालिन 1.25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर को 650 लीटर पानी में घोलकर बुआई के 8-10 दिनों बाद छिड़काव करें।

प्याज

प्याज की अच्छी उपज के लिए दोमट या बलुई दोमट मृदा उपयुक्त रहती है, जिसमें पर्याप्त जैविक पदार्थ और अच्छी जल निकास व्यवस्था हो। मृदा का पी. एच. मान 6.5-7.5 के बीच होना चाहिए। प्रमुख किस्मों में पूसा माधवी, पूसा रेड, व्हाइट फ्लैट, पूसा व्हाइट राउंड, ब्राउन स्पेनिश, सेलेक्शन-126, पूसा रिद्धि, भीमा लाइट रेड, भीमा डार्क रेड, भीमा रेड, भीमा किरण, भीमा शक्ति, भीमा श्वेता, भीमा सफेद तथा हरी प्याज के लिए पूसा सौम्या शामिल हैं।

रबी प्याज के लिए 8-10 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। खेत की अंतिम तैयारी के समय 20-25 टन अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हैक्टर मिला दें। इसके अतिरिक्त 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर प्रयोग करें। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा

रोपाई से पूर्व दें। शेष नाइट्रोजन को दो बराबर भागों में बांटकर रोपाई के 30 और 45 दिनों बाद दें। इसके अतिरिक्त 50 कि.ग्रा. गंधक और 5 कि.ग्रा. जिंक प्रति हैक्टर का प्रयोग भी लाभकारी रहता है।

रोपाई से पूर्व पौधों की जड़ों को बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल

में 15-20 मिनट तक डुबोकर उपचारित करें। रोपाई के समय पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सें.मी. रखें। इस दूरी पर लगभग 5 लाख पौधे प्रति हैक्टर रखे जा सकते हैं।

अन्य सब्जियां

रबी की अन्य सब्जियों जैसे पालक, मेथी, गाजर, मूली और धनिया की बुआई कतारों में करें। प्रति हैक्टर बुआई के लिए पालक एवं मेथी 25-30 कि.ग्रा., गाजर 6-8 कि.ग्रा., मूली 8-10 कि.ग्रा. तथा धनिया 15-30 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। मेथी की प्रमुख किस्मों में पूसा अर्ली बंचिंग और पूसा कसूरी तथा पालक की किस्मों में ऑलग्रीन, पूसा ज्योति, पूसा हरित, पूसा भारती और जोबनेर ग्रीन शामिल हैं। खेत में 25-30 टन अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद तथा 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर प्रयोग करें।

बागवानी फसलें

आम

आम में गुच्छा रोग से बचाव के लिए अक्टूबर माह में 200 पी.पी.एम. नेफ्थलीन अम्लीय अम्ल का छिड़काव करें।

अमरूद

नए पौधों तथा 6 वर्ष से अधिक आयु के पौधों में क्रमशः 30 ग्राम और 180 ग्राम नाइट्रोजन प्रति पौधा प्रयोग करें।



अमरूद



केला

केला

केले में प्रति पौधा 55 ग्राम यूरिया, 155 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा 200 ग्राम पोटाश मिलाकर मृदा में दें।

आंवला

शूट गॉल मेकर से प्रभावित टहनियों को काटकर नष्ट कर दें। शुष्क विगलन की रोकथाम के लिए 6 ग्राम बोरेक्स प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

नीबू

रोगग्रस्त टहनियों को काटकर हटा दें तथा इसके बाद 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें। 3-4 वर्ष से अधिक आयु के पौधों में 700 ग्राम यूरिया देने से पहले सिंचाई करें।



नीबू

पुष्प एवं सगंधीय पौधे

गुलाब

पौधों की कटाई-छंटाई के बाद कटे हुए भागों पर डाइथेन एम-45 की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

ग्लैडियोलस

कंदों को रोपण से पूर्व बाविस्टिन 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल में 10-15 मिनट तक डुबोकर उपचारित करें। रोपण के समय पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25 सें.मी., कंद से कंद की दूरी 15 सें.मी. तथा गहराई 8-10 सें.मी. रखें। रोपाई से पूर्व क्यारियों में 5 ग्राम कार्बोफ्यूरोन प्रति वर्गमीटर की दर से मिलाएं। एक हैक्टर क्षेत्र के लिए लगभग 1.5-2.0 लाख कंदों की आवश्यकता होती है। आकर्षक एवं गुणवत्तापूर्ण फूलों के लिए प्रति वर्गमीटर 5 कि.ग्रा. कम्पोस्ट, 30 ग्राम नाइट्रोजन, 30 ग्राम फॉस्फोरस तथा 20 ग्राम पोटाश का प्रयोग करें।

गुलदाउदी

प्रारंभ में आने वाली कलियों को तोड़ दें, ताकि बाद में विकसित होने वाले फूल बड़े आकार के हो सकें।

डहेलिया

पौधों को गमलों में लगाएं। लॉन की घास की बारीक कटाई करने के बाद हल्की मात्रा में यूरिया का छिड़काव करें।



गुलाब



ग्लैडियोलस



गुलदाउदी

पपीता

पपीते की सफल बागवानी के लिए अच्छी जल निकास वाली गहरी, उपजाऊ एवं सामान्य पी.एच. मान वाली बलुई दोमट मृदा उपयुक्त रहती है। रोपाई के समय पॉलीथीन बैग से स्वस्थ पौध निकालकर प्रत्येक गड्ढे में तीन पौधे त्रिकोणाकार रूप में लगभग डेढ़ फीट की दूरी पर लगाएं। ऐसा नर पौधों की अधिक संभावना को ध्यान में रखते हुए

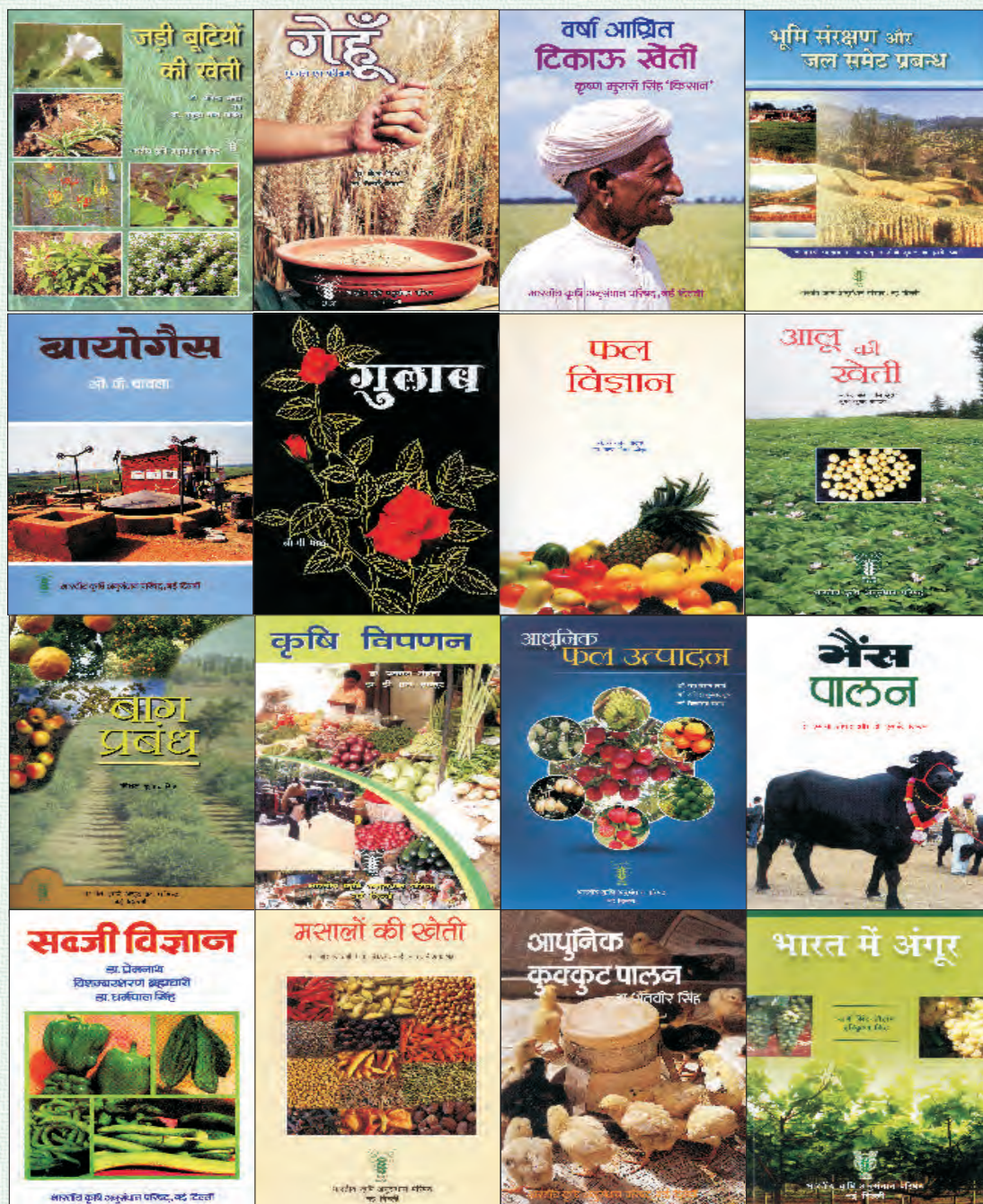


पपीता

किया जाता है। बगीचे में प्रत्येक 100 पौधों पर परागण के लिए लगभग 10 स्वस्थ नर पौधे रखें तथा कमजोर या अनावश्यक नर पौधों को हटा दें। बाद में प्रत्येक गड्ढे में एक स्वस्थ पौधा रखें।

बगीचे से अस्वस्थ पौधों को हटाते रहें तथा आवश्यकता अनुसार स्वस्थ पौध लगाएं। नियमित निराई-गुड़ाई करें और पौधों पर मृदा चढ़ाएं। पौधों को तेज हवा, रोग/कीट तथा जलभराव से बचाएं। प्रत्येक पौधे के लिए 90 ग्राम यूरिया, 250 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा 110 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश मिलाकर तने से कुछ दूरी पर गोलाकार रूप से मृदा में दें। इस मिश्रण का प्रयोग रोपाई के बाद दो-दो माह के अंतराल पर छह बार किया जा सकता है। तना गलन रोग से बचाव के लिए खेत में जलभराव न होने दें।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के चुनिंदा हिन्दी प्रकाशन



संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा, नई दिल्ली - 110 012
दूरभाष: 011-25843657, E-mail: bmicar.org.in

श्री अन्न: प्रकृति एवं स्वास्थ्य रक्षक

वर्तमान समय में मिलेट्स यानी श्री अन्न का महत्व तेजी से बढ़ रहा है। कम पानी में उगने की क्षमता, सीमांत भूमि में बेहतर अनुकूलन और पोषण से भरपूर होने के कारण ये फसलें किसानों और उपभोक्ताओं दोनों के लिए महत्वपूर्ण हैं। इनमें प्रोटीन, विटामिन, कैल्शियम, आयरन और अन्य पोषक तत्व भरपूर मात्रा पाए जाते हैं। यही कारण है कि श्री अन्न को जलवायु अनुकूल खेती, बेहतर पोषण और खाद्य सुरक्षा से जोड़कर देखा जा रहा है।

इन्हीं विशेषताओं को केंद्र में रखकर तैयार की गई पुस्तक 'श्री अन्न: प्रकृति एवं स्वास्थ्य रक्षक' में श्री अन्न फसलों के उत्पादन से लेकर पोषण, स्वास्थ्य, प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धन और उद्यमिता तक भारतीय कृषि अनुसंधान की जानकारी दी गई है। पुस्तक की खास बात यह है कि विषय को केवल खेती तक सीमित नहीं रखा गया, बल्कि उसके उपयोग, बाजार और रोजगार की संभावनाओं को भी शामिल किया गया है।

यह पुस्तक परिषद के वैज्ञानिकों डा. कामिनी बिष्ट, डा. मनीषा श्याम, डा. नितिन एन. गुड्डे, डा. कविता बिष्ट, डा. अजय कुमार राउत, डा. योगेन्द्र प्रताप सिंह, डा. एन.वी. कुंभारे, डा. नीलम यादव, डा. आर.आर. बर्मन और डा. यू.एस. गौतम द्वारा तैयार की गई है। विभिन्न विषयों से जुड़े इन लेखकों ने अपने अनुभव और ज्ञान के आधार पर श्री अन्न से संबंधित जानकारी को प्रस्तुत किया है।

लगभग 200 पृष्ठों की इस पुस्तक में आठ अध्याय हैं। इनमें श्री अन्न का परिचय, इनके प्रकार, विशेषताएं एवं खेती, वैश्विक स्थिति, पोषण एवं स्वास्थ्य में महत्व, भंडारण, प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन, पोषक व्यंजन, मूल्यवर्धित उत्पाद, उद्यमिता एवं स्टार्टअप तथा सफलता गाथाएं शामिल हैं। इससे पाठकों को श्री अन्न की खेती से लेकर उसके उपयोग और बाजार तक की पूरी जानकारी आसानी से मिल जाती है।

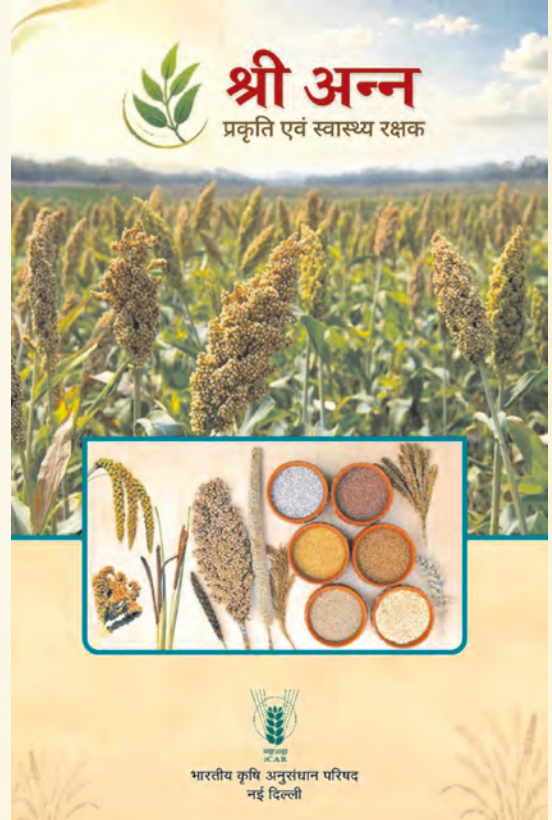
पुस्तक में पोषण और स्वास्थ्य से जुड़ी जानकारी को भी पर्याप्त स्थान दिया गया है। विभिन्न श्री अन्न फसलों में पाए जाने वाले पोषक तत्वों, स्वास्थ्य संबंधी महत्व और संतुलित आहार में उपयोग को सरलता से समझाया गया है। वहीं भंडारण, प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन से जुड़ा भाग किसानों और लघु उद्यमियों की दृष्टि से खास महत्व रखता है। आज केवल फसल उत्पादन करना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि उपज का बेहतर उपयोग

और उससे अधिक आय प्राप्त करना भी जरूरी है। पुस्तक में इसी विषय को ध्यान में रखते हुए प्रसंस्करण और विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पादों की जानकारी दी गई है। साथ ही श्री अन्न से बनने वाले कई पौष्टिक व्यंजनों को भी शामिल किया गया है, जिससे इनके घरेलू उपयोग को बढ़ावा मिल सकता है।

उद्यमिता और स्टार्टअप से संबंधित अध्याय युवाओं, स्वयं सहायता समूहों और छोटे उद्यमियों के लिए उपयोगी जानकारी प्रदान करता है। इसमें श्री अन्न से तैयार उत्पादों के प्रसंस्करण, पैकेजिंग और विपणन के माध्यम से आय के नए अवसरों का भी वर्णन मिलता है। पुस्तक में दी गई सफलता गाथाएं इस बात को और स्पष्ट करती हैं कि श्री अन्न केवल पोषक फसल ही नहीं, बल्कि आजीविका और उद्यमिता का भी अच्छा माध्यम बन सकते हैं।

‘पुस्तक उपलब्धता’

इस पुस्तक का मूल्य मात्र 850 रुपये है और इसे कृषि ज्ञान प्रबंधन निदेशालय, कृषि अनुसंधान भवन-1, नई दिल्ली से प्राप्त किया जा सकता है। पुस्तक की भाषा सरल है और विषयों को क्रम से रखा गया है। इससे कृषि और पोषण जैसे वैज्ञानिक विषय भी सहज रूप में समझ में आते हैं। किसान, विद्यार्थी, कृषि वैज्ञानिक, प्रसार कार्यकर्ता और उद्यमी सभी के लिए उपयोगी साबित हो सकती है। श्री अन्न उत्पादन को वैज्ञानिक और लाभकारी बनाने की दिशा में यह पुस्तक किसानों, विद्यार्थियों, शिक्षकों, कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं, पर्यावरणविदों और शोधकर्ताओं के लिए निश्चित रूप से एक उपयोगी ग्रंथ है।





पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives

नैनो उर्वरकों का कमाल, हर खेत-किसान बने खुशहाल

नैनो यूरिया प्लस • नैनो डीएपी • नैनो एनपीके
नैनो ज़िंक • नैनो कॉपर • धरामृत • सागरिका • जैव उर्वरक

उत्तम खेती के लिए स्मार्ट समाधान

मिट्टी की
उर्वरता बढ़े



पर्यावरण
के लिए सुरक्षित



कम मात्रा में
अधिक प्रभाव



इफको
का है यह अभियान,
स्वस्थ हो धरती,
खुशहाल बने किसान



कम लागत में
अधिक उत्पादन



फसल की
गुणवत्ता में सुधार



भंडारण एवं प्रयोग
करने में आसान

नैनो उर्वरक अपनाओ, फसलों का उत्पादन, गुणवत्ता और
मिट्टी की उर्वरता बढ़ाओ।



इफको के नैनो उर्वरक सम्पूर्ण स्वदेशी हैं | इफको द्वारा विकसित नैनो उर्वरक, आत्मनिर्भर भारत एवं आत्मनिर्भर कृषि की पहचान हैं



इंडियन फार्मर्स फर्टिलाइजर कोऑपरेटिव लिमिटेड

इफको सदन, सी-1, डिस्ट्रिक्ट सेंट्रल, साकेत प्लेस, नई दिल्ली - 110017

दूरभाष: 91-11-26510001, 91-11-42592626 | वेबसाइट: www.iffco.in

ग्राहक सेवा हेल्पलाइन नंबर (टोल फ्री): 1800 103 1967

इफको के उत्पाद
और सेवाओं के बारे
में अधिक जानकारी
के लिए स्कैन करें
और हमसे जुड़ें

